शैक्षणिक संदर्भ

वर्ष: 17 अंक 94 (मूल क्रमांक 151)
मार्च-अप्रैल 2024 मूल्य: ₹ 50.00

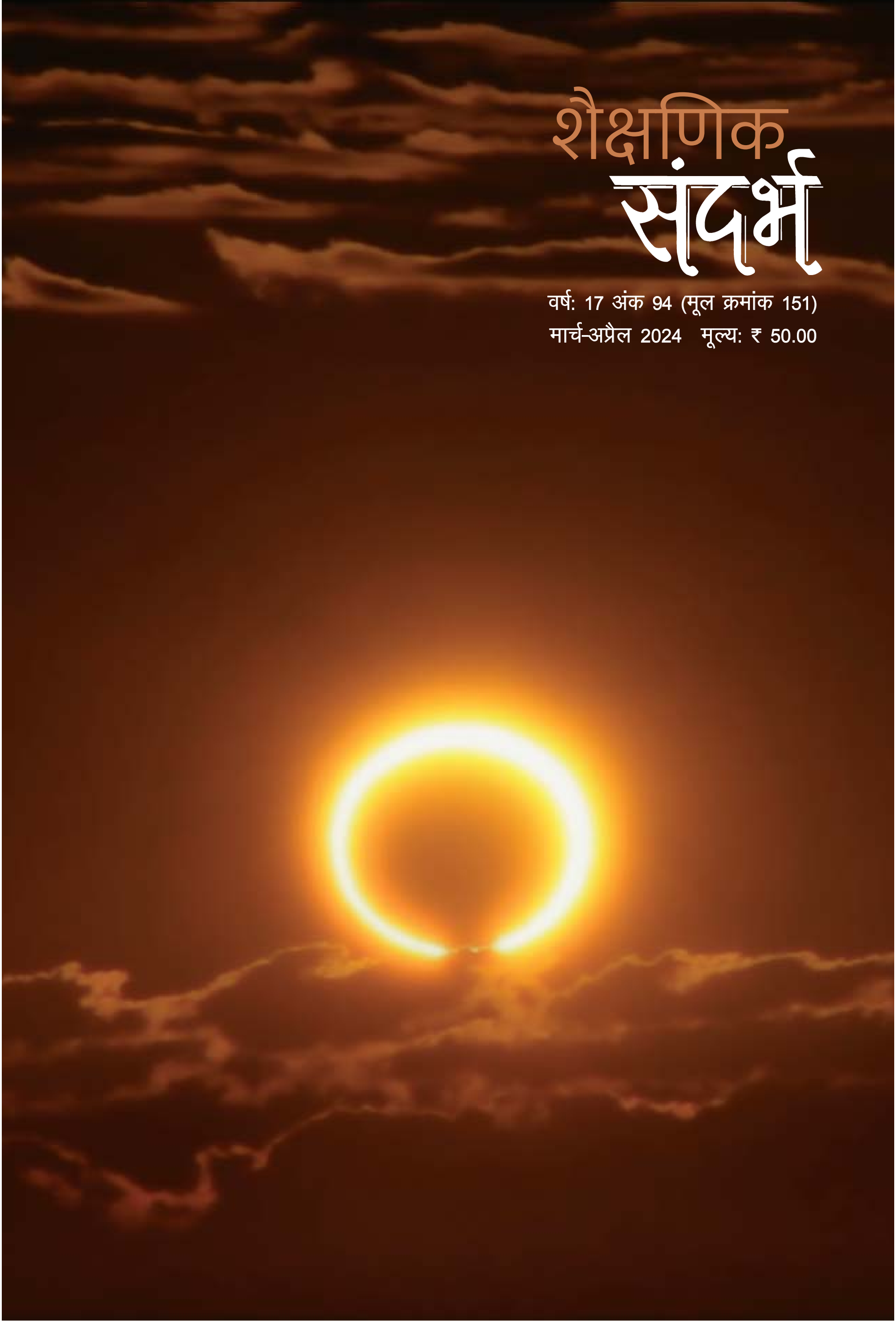

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

सह-सम्पादक
पारुल सोनी

सहायक सम्पादक
अतुल वाधवानी

सम्पादकीय सहयोग
सुशील जोशी
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री

वितरण: झनक राम साहू

सहयोग
हिमांशु बावनकर
कमलेश यादव

शैक्षणिक
संदर्भ

वर्ष: 17 अंक 94 (मूल क्रमांक 151)
मार्च-अप्रैल 2024

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 4200944
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh@eklavya.in
वितरण: circulation@eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1200.00	8000.00

मुखपृष्ठ: *NASA द्वारा ली गई सूर्यग्रहण की तस्वीर।* जब पृथ्वी की छाया चाँद पर पड़ती है तो चन्द्रग्रहण, और जब चाँद की परछाईं पृथ्वी पर पड़ती है तो सूर्यग्रहण होता है। मगर ये सूर्य और चन्द्र ग्रहण आखिर कैसे और कब लगते हैं? आकाशीय पिण्डों की गति की व्याख्या करते लेखों की कड़ी के इस आखिरी लेख में, जानिए इन हैरतअंगेज़ नज़ारों के बारे में, *पृष्ठ 19* पर।

कवर 3: *बीती सदी के दो बेहद प्रभावशाली व्यक्तियों – अल्बर्ट आइंस्टाइन और रवीन्द्रनाथ ठाकुर – की मुलाकात की तस्वीर।* सत्य के इन दो खोजियों के बीच क्या बातचीत हुई होगी, इसकी कल्पना करने के लिए इनके जीवन को जानना और समझना ज़रूरी है। ठाकुर के जीवन पर न सही, लेकिन इस अंक में आइंस्टाइन के जीवन पर हरिशंकर परसाई द्वारा रोशनी डाली गई है। जानिए, इस रोशनी की प्रकृति के बारे में, *पृष्ठ 39* पर।

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट एवं समत्वम ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

LINK : Cover 1 - https://lawrencehallofscience.org/news/discover-the-science-behind-the-ring-of-fire-eclipse-on-october-14/
Cover 3 - https://www.getbengal.com/details/when-two-planets-were-engaged-in-a-chat-why-tagore-and-einstein-never-agreed

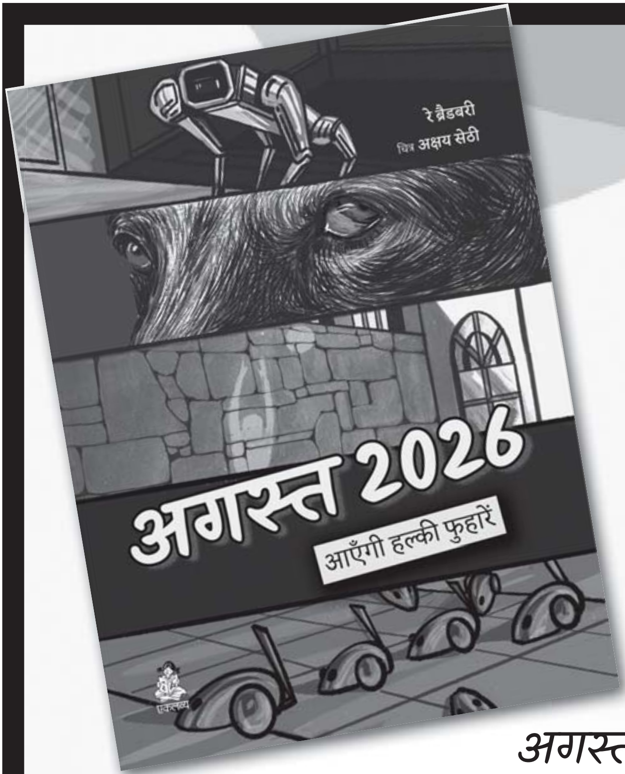

लेखक: रे ब्रैडबरी

अनुवाद: लाल्टू

अगस्त 2026
आएँगी हल्की फुहारें

मूल्य: ₹ 75.00

दूसरे विश्व युद्ध के बाद लिखी इस मशहूर कहानी में जाने-माने अमरीकी लेखक रे ब्रैडबरी इक्कीसवीं सदी के एक ऐसे दौर की कल्पना पेश करते हैं जहाँ मशीनी तरक्की से ज़िन्दगी बेशक आसान बनी है लेकिन इन्सान एक ऐसा अतीत बन चुका है जिसे याद करने वाला अब कोई नहीं। जंगें इन्सान निगल गईं! रह गई तो बस उसकी परछाई, अपनी पहचान तलाशती। यह कहानी पहली बार हिन्दी में ग्राफिक रूप में...

अपनी प्रति बुक कराने के लिए सम्पर्क करें...

फोनः **+91 755 297 7770-71-72;** ईमेलः **pitara@eklavya.in**
www.eklavya.in | www.eklavyapitara.in

एकलव्य

क्या जैव विविधता राजनीति विज्ञान की शिक्षा...

प्रकृति एक रंग में तो डूबी है नहीं! कितने-कितने रंग, कितने-कितने जीव, कितनी विविधता और कितना गहरा सहचर्य! फिर भला हम इन्सान क्यों बात-बात पर विविधता को भेदभाव की शक्ल दे दिया करते हैं? क्या कुछ देर ठहरकर, अपने आसपास की प्रकृति को गौर-से देखने पर, साथ-साथ रहना सीखा जा सकता है? युवान एविस इस प्रश्न से जुड़े अपने अनुभव, प्रस्तुत लेख के ज़रिए बड़े कौतूहल के साथ साझा करते हैं। और कहते हैं कि यह कौतूहल, यह सवाल करने की प्रवृत्ति एक ज़रूरी राजनीतिक कार्य है। जानिए कैसे...

31

शिक्षा में कला के प्रतिनिधि के रूप में लाइब्रेरी

शिक्षा में कला का क्या स्थान है? किस तरह कला हमें खुद से, दूसरों से और दुनिया से जोड़ने की सम्भावना रखती है? ऐसे में, लाइब्रेरी किस तरह एक ऐसी जगह बन सकती है जो कला का प्रतिनिधित्व कर सके? क्या रूप, क्या रंग होंगे ऐसी कलात्मक लाइब्रेरी के? समीना मिश्रा का यह लेख ऐसे कई सवालों पर सोचने को उकसाता है और साथ ही, एक ऐसे सफर पर ले चलता है जहाँ जीने को, होने को अलग-अलग चश्मों से देखा जा सकता है।

65

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-94 (मूल अंक-151), मार्च-अप्रैल 2024

इस अंक में

07 स्कूली कक्षा में विज्ञान
अर्पिता पाण्डे

11 चुम्बक मेरी बचपन की यादों में
माधव केलकर

19 आकाशीय पिण्डों की गति की व्याख्या: भाग 5
उमा सुधीर

31 क्या जैव विविधता राजनीति विज्ञान की शिक्षा...?
युवान एविस

39 सरल आदमी की कठिन बात
हरिशंकर परसाई

51 शिक्षकों की सतत तैयारी का मंच – मासिक गोष्ठी
कालू राम शर्मा

58 बच्चों ने बनाई किताबें
मीनू पालीवाल

65 शिक्षा में कला के प्रतिनिधि के रूप में लाइब्रेरी
समीना मिश्रा

72 संज्ञाओं की जाँच-पड़ताल
रमा कान्त अग्निहोत्री

75 नया मानव (विज्ञान कथा)
तृष्णा बसाक

84 कुकर में सेफ्टी वॉल्व क्यों लगाया जाता है?
सवालीराम

आपने लिखा

संदर्भ अंक-150 (जनवरी-फरवरी) में विक्रम चौरे का लेख *गणित सीखने में बातचीत की ज़रूरत* पढ़ा। इसमें उन्होंने बच्चों को गणित सिखाने में प्रयोग की जाने वाली भाषा के प्रभाव और बच्चों की समझ या यूँ कहें कि बाल मनोविज्ञान का काफी अच्छा चित्रण किया है। पहले केस में, माधुरी नामक बालिका जिसकी गिनती क्लास की सबसे होशियार बालिकाओं में है, वह अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए सवाल को समझने या अपने भ्रम को दूर करने की बजाय केवल प्रथम आने पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। इस उदाहरण के माध्यम से लेखक ने शिक्षा में सामाजिक रूप से आए एक अत्यन्त बुनियादी परिवर्तन की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है, जो शिक्षा हमारे ज्ञान की वृद्धि करने के लिए होनी चाहिए थी वो अब प्रदर्शन का एक साधन बनती जा रही है। बच्चे शायद शिक्षा का असली अर्थ समझने और सवाल करने के लिए प्रेरित नहीं हो पा रहे हैं। आज-कल जो प्रतियोगी परीक्षाएँ होती हैं, उनमें सवाल तो दसवीं तक के स्तर के आते हैं पर हमारा दिमाग घुमाने के लिए पर्याप्त होते हैं क्योंकि हम विषय को समझने की बजाय अपना स्कोर कार्ड बढ़ाए रखने के लिए ज़्यादा मेहनत करने में लगे रहते हैं।

इसी तरह केस-2 में खुशी ने पहले सवाल को इसलिए अलग ढंग से हल किया क्योंकि वह संख्या की स्थानीय मान की अवधारणा से अनजान थी। लेकिन उसको दूसरे सवाल को सही तरह से हल करने में कोई दिक्कत नहीं गई। यहाँ उसने अपना भ्रम दूर करने की कोशिश नहीं की, हालाँकि उसने अपनी बुद्धि का उपयोग कर बिना सहायता के सवाल सही तरह से हल किया, यह सराहनीय है।

केस-3 में ऊषा ने दोनों सवालों को इस तरह मिला दिया कि एक नया ही सवाल बन गया। हालाँकि, उसने इस नए सवाल को सही हल करने की पूरी कोशिश की। यह केस बाकी दोनों केस से ज़्यादा दिलचस्प था क्योंकि बच्ची को गणित के कुछ नियम तो पता थे लेकिन झिझक या पूर्व के कटु अनुभवों के चलते कुछ नया सीखने में उसे समस्या हो रही थी।

इस लेख में प्रस्तुत तीनों केस बच्चों द्वारा किसी विशेष परिस्थिति में किए गए तीन अलग-अलग व्यवहारों को दिखाते हैं किन्तु इनमें एक समानता भी थी। तीनों ने ही सामाजिक या आन्तरिक दबाव के कारण अपनी जिज्ञासा या भ्रम का निवारण करने के लिए सवाल नहीं पूछे। यह चिन्ताजनक है क्योंकि हमारी सवाल न पूछने की प्रवृत्ति जो बचपन में डर के कारण हमारे मन में घर कर जाती है, जीवन के अन्त तक

बनी रहती है जिससे हम न केवल स्कूल में पिछड़ जाते हैं अपितु एक अच्छा नागरिक बनने से भी वंचित रह जाते हैं और अपने मूलभूत कर्तव्यों का निर्वहन व अधिकारों का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।

इस समस्या का हल तो लेख के शीर्षक से ही पता चलता है - गणित सीखने में बातचीत की ज़रूरत। यह बातचीत या संवाद न केवल गणित अपितु छात्र जीवन में हर विषय या मानव जीवन के हर एक पहलू के लिए आवश्यक है।

देवेश शांडिल्य
प्रयोगशाला तकनीशियन
शासकीय नर्मदा महाविद्यालय
होशंगाबाद, म.प्र.

संदर्भ अंक-150 में राजाबाबू का लेख *और हम कह भी नहीं पाते* पढ़ा। पढ़कर अपने आसपास के बच्चों की प्रताड़ना और भय के कई सारे उदाहरण आँखों के सामने घूम गए। इस मानसिकता के पीछे कई सारे कारण हो सकते हैं - शायद सबसे महत्वपूर्ण है कि हम इस विषय पर बात ही नहीं करते। और बात इसलिए नहीं करते क्योंकि यह ज़रूरी नहीं लगता। यह बहुत सामान्य-सी बात लगती है। घर पर भी यह एक सामान्य घटना है और स्कूल में भी। सालों-साल से स्कूल में शिक्षकों से बच्चों को अनार-आम पढ़ाने के लिए बोला जा रहा है, पर बच्चों के साथ कैसे व्यवहार करें, यह उनको कोई नहीं सिखाता, इस पर कोई बातचीत नहीं होती। बच्चे मार के अलावा किसी अन्य तरीके से भी सीख सकते हैं, इस पर बात ही नहीं होती। इस कारण शिक्षकों को सिर्फ मार-पिटाई और डर का ही रास्ता दिखाई देता है क्योंकि उनके अपने अनुभव में भी यही मौजूद रहा है।

अब यदि इसके हल की बात करें तो होना यह चाहिए कि छोटा हो या बड़ा, सबका सम्मान करें। उसकी बात को ध्यान से सुनें और प्यार से समझाने का प्रयास करें। इस बारे में भी सोचना ज़रूरी है कि इस तरह के व्यवहार से बच्चों के आगामी जीवन पर कितने दूरगामी परिणाम पड़ सकते हैं।

प्रेरणा मालवीय
अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन
भोपाल, म.प्र.

संदर्भ अंक-150 पढ़ा। शिक्षा के बुनियादी पहलू जैसे गणित सीखने में बातचीत की ज़रूरत, माधव केलकर जी के रिफ्लेक्टिव लेखन को लेकर अनुभव, किशोर पंवार के प्रयोग और अवलोकन – सभी कुछ बहुत उपयोगी हैं। आने वाली नई किताब *पढ़ना सीखने और सिखाने का बुनियादी ताना-बाना* का मुझे भी इन्तज़ार है। शुभकामनाएँ।

प्रेमपाल शर्मा,
नई दिल्ली

फॉर्म 4 (नियम-8 देखिए)

द्वैमासिक शैक्षणिक संदर्भ के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बन्ध में जानकारी

प्रकाशन स्थल :	भोपाल
प्रकाशन की अवधि :	द्वैमासिक
प्रकाशक का नाम :	निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026
मुद्रक का नाम :	निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026
सम्पादक का नाम :	राजेश खिंदरी
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026

उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है

नाम :	**टुलटुल बिस्वास, निदेशक, एकलव्य फाउण्डेशन**
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026

मैं, टुलटुल बिस्वास, यह घोषणा करती हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

टुलटुल बिस्वास, एकलव्य, मार्च 2024

स्कूली कक्षा में विज्ञान

अर्पिता पाण्डे

विज्ञान शिक्षा में अपनाई गई पद्धति कैसे करिश्मे कर सकती है, यह नीचे दी गई घटना से उजागर होता है - इसका बेजोड़ उदाहरण है यह। यहाँ इस घटना से जुड़े जीव वैज्ञानिक मुद्‌दों की उतनी नहीं बल्कि प्रमुखत: शैक्षिक मुद्‌दों की बात की जाएगी।

नए जीवाश्म की खोज

एक सीनियर हाई स्कूल में भूविज्ञान की कक्षा के दौरान डंग बीटल की एक नई प्रजाति का जीवाश्म खोजा गया। किस्सा जापान के कैओ विश्वविद्यालय से सम्बद्ध एक स्कूल कैओ सीनियर हाई स्कूल का है। यह स्कूल प्रयोग आधारित शिक्षण के लिए प्रसिद्ध है।

पिछले साल सितम्बर में भूविज्ञान की एक कक्षा के दौरान सीनियर कक्षा के एक छात्र कोटा यातागाई ने एक अच्छी तरह से संरक्षित जीवाश्म खोजा। बाद में पता चला कि यह एक नई प्रजाति का डंग बीटल है। कक्षा में यह गतिविधि इन बच्चों को चट्‌टानों में से ढूँढकर जीवाश्म निकालने का अनुभव देने के लिए करवाई जा रही थी। ये चट्‌टानें लगभग 3,00,000 साल पहले पूर्वी जापान के संस्तरों यानी चट्‌टानों की परतों (strata) से निकाली गई थीं।

एक दिन कैओ स्कूल के शिक्षक और विद्यार्थी फील्ड विज़िट पर गए थे। इस विज़िट के दौरान बच्चों ने एक म्यूज़ियम में चट्‌टान खोदकर जीवाश्म निकाले। यह गतिविधि स्कूल में पढ़ाई के दौरान की जाने वाली विभिन्न गतिविधियों में से एक थी। जब स्कूलों में बच्चों द्वारा विज्ञान के प्रयोग किए जाते हैं तो शिक्षक को उचित मार्गदर्शन देकर उन्हें आगे बढ़ाना होता है। जब बच्चे अपने नज़रिए से किसी नई चीज़ को देख रहे होते हैं तब उनका आत्मविश्वास पूरी तरह इस बात पर टिका होता है कि उनके शिक्षक इस बारे में क्या कह या सोच रहे हैं। इसलिए इस तरह के प्रयोगों में शिक्षक की तैयारी बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

हिरोकी आइबा कैओ प्रारम्भिक स्कूल में विज्ञान शिक्षक हैं। वे सन् 1995 से इस विधि से पढ़ा रहे हैं जिसके तहत वे अपनी कक्षा को चट्‌टानों से जीवाश्म खोजने के लिए ले जाते थे। संग्रहालय के सहयोग से इस पद्धति का उपयोग कैओ सीनियर हाई स्कूल के साथ-साथ 1000 अन्य स्कूलों में भी किया जा रहा है।

कैओ सीनियर हाई स्कूल में भूविज्ञान कक्षा के दौरान मिले डंग बीटल की एक नई प्रजाति का जीवाश्म। फोटो साभार: हिरोकी आइबा के सौजन्य से।

जापान के तोचिगी प्रान्त में स्थित कोनोहा फॉसिल म्यूज़ियम आगन्तुकों को वहाँ पाई गई चट्टानें स्मृति चिन्ह के रूप में बेचता है। आइबा अपने छात्रों को इन्हीं चट्टानों में जीवाश्म खोजने को प्रेरित करते हैं। जब हिरोकी को भान हुआ कि एक चट्टान में खोजा गया 25 मिमी का एक कीड़ा अभी तक ज्ञात प्रजातियों में से नहीं है तो उन्होंने एक विदेशी शोधकर्ता की मदद से इसके बारे में और जानकारी निकाली। खोजबीन और अध्ययन के बाद पता चला कि यह कीड़ा एक बीटल (गुबरैला) है जो जानवरों का गोबर खाने वाली एक प्रजाति है और जियोट्रॉपिडो कुल से ताल्लुक रखता है। खोजबीन से यह भी उजागर हुआ कि यह गुबरैला सेरोटॉफायस वंश की एक प्रजाति है। इसका नाम छात्र यातागाई के सम्मान में *'सिरेटोफायरस यातागाई'* रखा गया। इन चट्टानी पर्तों से अभी तक 110 जीवाश्म खोजे गए हैं लेकिन वे सब जीव पहले से ज्ञात थे।

अनोखे प्रयोग की उपलब्धि

यह पहली ही बार हुआ होगा कि स्कूल में प्रयोगों के दौरान कोई नई जीव प्रजाति खोजी गई। सामान्यतया, यह माना ही नहीं जाता कि बच्चे कक्षा में कोई नई बात खोजेंगे।

शालाओं के साथ भूविज्ञान को जोड़ने की सम्भावनाएँ

आम तौर पर स्कूल की पढ़ाई में भूविज्ञान विषय नहीं पाया जाता। भूगोल विषय ज़रूर होता है लेकिन इसकी विषय-वस्तु विज्ञान-तकनीक-गणित के साथ कम-से-कम जुड़ाव दिखाती है। आम तौर पर भारत में भूविज्ञान विषय की पढ़ाई स्नातक स्तर से शुरू होती है और इसे पढ़ने वाले विद्यार्थी भी अपेक्षाकृत कम ही होते हैं। इसलिए मिडिल स्तर पर विज्ञान, गणित, भूगोल आदि के कुछ ऐसे पाठ पढ़ाते समय जिनमें सम्भावना है, वहाँ भी भूविज्ञान की पाठ्य सामग्री और आसपास फैली भौगोलिक संरचनाओं का विशेष इस्तेमाल नहीं हो पाता है।

यहाँ कुछ सुझाव दिए जा रहे हैं कि कैसे आप कक्षा में पढ़ाते समय विज्ञान, गणित, भूगोल जैसे विषयों में बच्चों को फील्ड विज़िट पर ले जाकर या फील्ड की कुछ सामग्री को कक्षा में लाकर बच्चों को देखने-छूने के मौके दे सकते हैं और उन मुद्दों पर बच्चों की रुचि जगा सकते हैं।

जैसा कि इस लेख में जीवाश्म सम्बन्धी उदाहरण दिया गया है। जीव विज्ञान को पढ़ाते समय ऐसे किन्हीं जीवाश्म के दीदार करना रोमांचित करता ही है। एक बार किसी जीव या वनस्पति का जीवाश्म बच्चों के हाथ में देने पर वो कितने सवाल पूछते हैं, यह देखने लायक होता है। किस जीव का जीवाश्म है, कैसे बना होगा, यह तो पत्ती है तो पूरा पेड़ कैसा होता होगा, कितना ऊँचा पेड़ होता होगा, क्या इसमें फूल भी खिलते थे, यह जीव क्या खाता होगा, कहाँ रहता होगा, किससे डरता होगा, क्या इस समय तक इन्सान धरती पर आ गए थे आदि। यह बिलकुल ज़रूरी नहीं है कि हर बार कोई नई खोज होगी ही, लेकिन सवाल-जवाब से भी बच्चे बहुत कुछ सीख सकते हैं।

किसी छोटी-बड़ी नदी के तट पर घूमते हुए नदी द्वारा किए जाने वाले अपरदन, अवसादन एवं रेत पर बनने वाली लहरों के निशान के पैटर्न को समझना और पानी के प्रवाह की दिशा का अन्दाज़ लगाना, एक महत्वपूर्ण अभ्यास हो सकता है। फील्ड पर भी बच्चों की ओर से काफी सवाल आ सकते हैं। नदी कब से बह रही होगी, क्या हमेशा से यहीं से बह रही थी या पहले किसी और जगह से बह रही होगी, पानी के साथ बहने वाले पत्थर गोल क्यों होते जाते हैं वगैरह।

इसी तरह रसायन विज्ञान के पाठ में जब लोहा, कोयला, तांबा, मैंग्नीज़ आदि के बारे में बताया जा रहा हो तब लोहे के विविध अयस्कों जैसे हेमाटाइट, मैग्नेटाइट, ऑयरन पायराइट आदि दिखाकर, इनके करीबी अवलोकन का मौका दिया जा सकता है। बच्चों ने शायद मैंग्नीज़ पॉवडर और कॉपर सल्फेट को पॉवडर स्वरूप में कैमेस्ट्री लैब में देखा हो, लेकिन अयस्क को हाथ में लेना, उसके रंग को पहचानना, अयस्क से फर्श पर लकीर खींचकर देखना, उस टुकड़े के भारी या हल्के होने को महसूस करना आदि काफी रोमांचकारी और उपयोगी हो सकता है।

चट्टानों से सम्बन्धित पाठ भी अक्सर आग्नेय, अवसादी और कायान्तरित चट्टानों की परिभाषाओं तक ही सीमित रह जाते हैं। जबकि सामान्यतः हमारे आसपास

ग्रेनाइट, बहिर्भेदी (ज्वालामुखीय) चट्टान, चूना पत्थर, सेंड स्टोन, छुई मिट्टी, गेरू, बॉक्साइट, संगमरमर जैसी चट्टानों के टुकड़े आसानी-से मिल जाते हैं। इनके अलावा नदी के किनारे मिलने वाले सफेद, हरे, लाल पत्थर या बहुरंगी स्ट्रिप वाले पत्थर भी कक्षा में लाकर रखे जा सकते हैं। किसी विशेषज्ञ की मदद से इनके नाम और गुण जाने जा सकते हैं। यदि आप फील्ड में जाकर चट्टानों को देखने वाले हैं तो वो चट्टान किसी पहाड़ का हिस्सा है या गुमनाम-सी चट्टान है, चट्टान के गठन, आकार, रंग, क्या किन्हीं खनिजों से मिलकर बनी है जैसी कई बातों को समझा और परखा जा सकता है।

गणित में सममिति पढ़ाते हुए कई खनिजों के क्रिस्टल दिखाए जा सकते हैं। जैसे नमक, कैल्साइट, फ्लोराइड, गार्नेट, आयरन पायराइट आदि।

सम्भावनाएँ तो बहुत हैं लेकिन ज़रूरी है कि शिक्षक पहल करें।

- माधव केलकर

मान्यता तो यही होती है कि अभी वे अन्य लोगों द्वारा खोजी गई जानकारी और सिद्धान्तों को समझ (रट) लें, वही बहुत है। इसलिए बच्चों के द्वारा यदि कोई नए अवलोकन या खोज हो भी जाए तो मान लिया जाता है कि ज़रूर कहीं कोई गलती हो गई होगी। बच्चों के प्रयासों को आम तौर पर गम्भीरता से बिलकुल भी नहीं लिया जाता।

अत: एक बच्चे के काम में इतनी दिलचस्पी लेते हुए उसे आखिर तक लेकर जाना, मंज़िल तक पहुँचाना इस प्रयोग की उपलब्धि है। हिरोकी आइबा और उनके साथियों ने यह विवरण *ट्रांज़ेक्शन्स एण्ड प्रोसीडिंग्स ऑफ पेलियंटोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ जापान* नामक एक अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका में प्रकाशित किया है। हिरोकी आइबा ने उसमें यह भी ज़िक्र किया है कि यह बीटल उन जानवरों के साथ मर गई होगी जिनका गोबर इसने खाया था। यह पता लगाना भी दिलचस्प होगा कि वो जानवर कौन-से रहे होंगे।

यह घटना इस बात का प्रमाण है कि यदि बच्चों को मुक्त खोज की छूट मिले, और शिक्षक इसके लिए तैयार हों तो स्कूली शिक्षा में किस हद तक नवाचार सम्भव है।

अर्पिता पाण्डे: मंदसौर इंटरनेशनल स्कूल, मंदसौर में विज्ञान संकाय में करिक्यूलम डिवेलपर के रूप में कार्यरत। इसके पहले *एकलव्य* की विज्ञान टीम के साथ काम किया। विज्ञान पढ़ाने और सीखने में रुचि। वर्तमान में, विशेष शिक्षा पर काम कर रही हैं।

यह लेख *साइंस जापान* पत्रिका के अंक 30 नवम्बर, 2023 में प्रकाशित लेख पर आधारित है।

चुम्बक मेरी बचपन की यादों में

माधव केलकर

मुझे बचपन में 8-9 साल की उम्र में चुम्बक को हाथों में लेकर कुछ कील, दरवाज़ों की सांकल, चिटकनी वगैरह से चिपकाकर देखने और 'टिक' आवाज़ को सुनने का मौका मिला था। टिक की आवाज़, जब चुम्बक लोहे की किसी वस्तु से अचानक जा चिपकता तो आती थी। मेरे दोस्त ने एक बार चुम्बक देकर ये सब करने का मौका दिया था और कुछ मिनटों बाद मुझसे चुम्बक वापस भी ले लिया। अभी मेरा मन भरा नहीं था लेकिन उसे चुम्बक लौटाना पड़ा।

उस दिन मैं काफी देर तक सोचता रहा कि उस टुकड़े में ऐसा क्या है कि वो लोहे को चिपकता है। सोचा, शायद गोंद लगाया गया हो। लेकिन मेरा उस समय तक का अनुभव बताता था कि कागज़ पर गोंद लगाने से तो कागज़ गीला-सा हो जाता है व उसमें चिपचिपापन आ जाता है। जिस चुम्बक को मैंने हाथ में लिया था, वह तो एकदम सूखा था। मैंने फिर सोचा शायद गोंद लगाकर धूप में सुखा लेते हों इसलिए चिपचिपापन खत्म हो जाता होगा लेकिन गोंद का चिपकाऊ गुण बरकरार रहता होगा। मैं तुरन्त काम पर जुट गया। मैंने लोहे के एक नट को अच्छे से धोकर गोंद चोपड़ी और

फिर धूप में सूखने के लिए रख दिया। आधे घण्टे बाद गोंद सूख चुकी थी। फिर मैंने उस नट को लोहे की कील वगैरह से चिपकाकर देखा लेकिन गोंद लगा नट नीचे गिर जाता था या नट से चिपकाने की कोशिश में कील नीचे टपक जाती थी। समझ में आया कि जो मैं सोच रहा था कि गोंद की वजह से लोहे में चिपकाऊ गुण आ जाएगा वैसा कुछ तो नहीं हुआ।

अगले दिन मैंने दोस्त के घर जाकर चुम्बक का और गहराई से अवलोकन किया। तो समझ आया कि कील वगैरह को चुम्बक छुलाने की ज़रूरत ही नहीं है। कील तो चुम्बक के करीब आते ही खुद खिंची चली आती है, चुम्बक से चिपकने। उस दिन यह भी जान लिया कि कुछ चीज़ें चुम्बक से नहीं चिपकतीं जैसे प्लास्टिक, लकड़ी का स्केल और प्रेशर कुकर। जब मैंने पूछा कि उसे चुम्बक कहाँ से मिला तो दोस्त ने बताया कि यह चुम्बक एक पिन होल्डर में लगा हुआ था। पिन होल्डर टूटने से यह उसके हाथ लग गया। मैंने जब पूछा कि चुम्बक कैसे बनाया जाता है, तो दोस्त ने कन्धे उचका दिए। यानी उसे भी नहीं मालूम था। मेरे दोस्त के बड़े भाई यह सब सुन रहे थे। उन्होंने कहा, “एकदम सरल है - लोहे के टुकड़े को रेल की पटरी के बीच रख दो। जब ट्रेन गुज़र जाए तो लोहे का टुकड़ा चुम्बक बन जाता है।”

यह सब सुनकर मन में एक आशा की किरण जागी कि मेरे पास भी एक चुम्बक हो सकता है जो पूरी तरह मेरा होगा, मैं उससे जितना चाहे खेल सकता हूँ।

मेरे घर से लगभग आधा किलोमीटर दूर से रेलवे लाइन गुज़रती थी। वहाँ से दोपहर तीन बजे एक ट्रेन रोज़ गुज़रती थी। घर पर आकर देखा तो मेरे पास कील, नट, बोल्ट जैसे लोहे के कई सामान थे। इसमें से मैंने लोहे का एक छोटा नट लिया और दोपहर रेलवे लाइन के पास जा पहुँचा। नट को पटरी के लकड़ी वाले स्लीपर पर रखा और ट्रेन आने का इन्तज़ार करने लगा। थोड़ी देर में सीटी देती हुई ट्रेन आई और नट के ऊपर से गुज़रने लगी - मैं आँखें गड़ाए देख रहा था परन्तु नट चक्कों के बीच ओझल हो गया। जैसे ही ट्रेन का आखिरी डिब्बा गुज़र गया, मैं उत्साह के साथ दौड़कर उस जगह जा पहुँचा। लेकिन वहाँ नट नहीं मिला। थोड़ी देर पटरी पर, पटरी के आसपास उस नट को

खोजा, लेकिन नट नहीं मिला। एक बार ऐसा लगा कि शायद नट चुम्बक बनकर ट्रेन के किसी चक्के से चिपक कर चला गया है। मैं मायूस होकर घर लौटा। दोस्त के भाई को सारा किस्सा सुनाया तो वे मुस्कुराने लगे। उन्होंने पूछा, "क्या तुमने सचमुच ऐसा करके देखा?" मैंने सिर हिलाकर हामी भरी। पता नहीं क्या सोचकर उन्होंने मुझे एक चुम्बक का टुकड़ा दे दिया और कहा, "जी भर कर खेलो। कल आना फिर और बात करेंगे।"

अगले दिन उन्होंने मुझसे कहा कि यदि लोहे पर से ट्रेन जाने से लोहा चुम्बक बन जाए तो पूरी लोहे की पटरी ही चुम्बक बन जाती। उस पर से तो रोज़ कई सारी ट्रेन गुज़रती हैं। उस समय मेरे दिमाग की ट्यूब लाइट जली - हाँ, ये तो मैंने सोचा ही नहीं था!

वैसे यह किस्सा मेरे बचपन का है। उस उम्र में भी मेरे मन में यह सवाल उठा था कि चुम्बक कैसे बनता है। मेरी सोच थी कि लोहे में गोंद लगाने से लोहे में चिपकाने का गुण आ जाता होगा जिसे मैंने करके देखा और समझ गया कि यह सोच सही नहीं है। दूसरी बात, एक सुना-सुनाया तरीका आज़माकर मैंने जान लिया था कि रेल की पटरी वाले तरीके से भी चुम्बक नहीं बना करते। दोस्त के बड़े भाई ने मुझे चुम्बक बनाने के दो तरीके सिखाए जिन्हें मैं थोड़ी देर बाद आपसे भी साझा करूँगा।

शुरुआती सोच-विचार

पहले इस बात पर विचार करते हैं कि क्या सभी इन्सानों को चुम्बक कैसे बनता है, चुम्बक काम कैसे करता है, इस बारे में जिज्ञासा होती होगी? मुझे लगता है, शायद जिज्ञासा तो सभी को होती है - शायद कुछ लोग उस पर आगे सोचना बन्द कर देते हैं, लेकिन कुछ लोग सोच-विचार को जारी रखते हैं, और अपने सवाल एवं विचार अन्य लोगों के साथ साझा करते हैं। कई दफा लिखते भी हैं। इन विचारकों की बातें सुनकर कुछ और लोग भी उस मुद्दे पर सोचने लगते हैं। अपनी बात लोगों से कहते हैं। इस तरह विचारों एवं ज्ञान का प्रचार-प्रसार और उनके बारे में खोजबीन होती रहती हैं।

यहाँ हम बात कर रहे हैं प्रकृति में लौह अयस्क के साथ मिलने वाले चुम्बक की जिसे दो-तीन हज़ार साल पहले लोड-स्टोन कहा जाता था। जो

आकार में किसी पत्थर के टुकड़े जैसा बेतरतीब होता था। शुरुआत से ही चुम्बक द्वारा लोहे को आकर्षित करने के गुण को अचरज से देखा गया इसलिए चुम्बक में आकर्षण का गुण क्यों होता है, इस पर काफी सोच-विचार हुआ। इस आकर्षण के गुण को लेकर क्या विचार सामने आए एवं प्रस्तुत हुए, पहले उन्हें देखते हैं। यहाँ जो उदाहरण दे रहे हैं, वे प्रमुख रूप से यूनान, चीन आदि देशों के विचारकों के हैं।

यूनानी विचारक थेल्स के मुताबिक 'चुम्बक में आत्मा होती है क्योंकि वह लोहे में गति उत्पन्न कर देता है।'

एक अन्य विचारक एपिक्यूरियस का विचार था कि 'लोड-स्टोन या चुम्बक लोहे को इसलिए आकर्षित करता है क्योंकि इससे (लोड-स्टोन से) निरन्तर बहने वाले कण, जो कि सभी पदार्थों से बहते रहते हैं, लोहे से बहने वाले कणों के साथ विशेष समरूपता रखते हैं और टकराने के बाद वे आसानी-से जुड़ जाते हैं।'

आज से लगभग दो हज़ार साल पहले एक अन्य विचारक प्लूटार्क ने यह कल्पना की थी कि 'चुम्बक के इर्द-गिर्द एक प्रभामण्डल होता है। इस प्रभामण्डल के कणों का आकार लोहे की सतह पर मौजूद छिद्रों से मिलता-जुलता होता है। अतः लोहा चुम्बक को बहुत अच्छी तरह जकड़ लेता है, जैसा और कोई पदार्थ नहीं कर पाता।'

एक अन्य विचारक देकार्ते का मानना था कि 'चुम्बक की सतह पर पेंच-ही-पेंच होते हैं जो लगातार घूमते रहते हैं। ये पेंच लोहे में मौजूद चूड़ीदार छेदों में कसकर फिट हो जाते हैं।'

लगभग 1700 साल पहले चीनी दार्शनिक कूफो ने कहा कि "चुम्बक लोहे को ठीक उसी तरह आकर्षित करता है जैसे आबनूस सरसों के बीज को।" (यहाँ चुम्बकत्व की तुलना स्थिर विद्युत आकर्षण से की गई है।)

ऐसा नहीं है कि चुम्बक के बारे में सिर्फ दार्शनिक या विचारक ही सोचते थे। चुम्बक के बारे में, उसके इस तरह के आकर्षण के व्यवहार के बारे में लौह अयस्क को गलाने वाले कारीगरों और लोहे की खदानों में काम करने वाले मज़दूरों को भी मालूम था। हो सकता है, सबसे पहले इन कारीगरों व खदान मज़दूरों को ही लोड-स्टोन के गुण के बारे में पता चला हो।

यहाँ साझा किए गए कई विचार पढ़कर आपको यह तो समझ आ गया होगा कि विचारक हमेशा वैज्ञानिक तरीके से व्याख्या करें, यह ज़रूरी नहीं है। इसलिए अज्ञात कारणों में आत्मा, ईश्वर, अन्य शक्तियाँ भी शामिल हो जाती हैं।

दूसरी बात, विचारक जिस चुम्बक की बात कर रहे थे, वे प्रकृति में मिलने वाले लौह-अयस्क के साथ

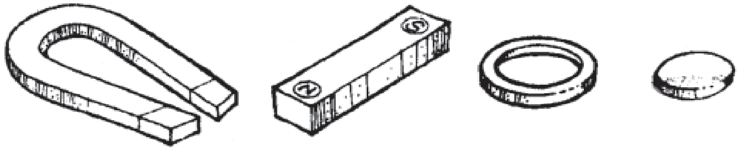

चित्र-1: नाल चुम्बक, छड़ चुम्बक, रिंग मैगनेट, चकती चुम्बक

पाए गए थे। यानी इन्सान या फैक्ट्री द्वारा नहीं बनाए गए थे। इसलिए कुछ अज्ञात कारण, चमत्कार जैसी बातें खुद-ब-खुद जुड़ जाती थीं।

चलिए, अब हम चुम्बक बनाने के कुछ तरीकों की बात करते हैं।

आम तौर पर आपने विभिन्न आकार के चुम्बक देखे होंगे (चित्र-1)। ये कारखानों में तैयार किए गए चुम्बक हैं जिन्हें बड़ी संख्या में तैयार किया जाता है और आम तौर पर विज्ञान प्रयोग शालाओं में पढ़ाई के लिए उपलब्ध करवाया जाता है। और बहुत-से चुम्बक विविध इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, खिलौनों, दैनिक ज़रूरत के उपकरणों आदि में उपयोग किए जाते हैं।

खुद का चुम्बक बनाना

हम जो चुम्बक बनाने वाले हैं, उसे बनाने में फैक्ट्री के बने चुम्बकों की एक हद तक भूमिका रहेगी। तो पहले देखते हैं कि एक लोहे की कील या सायकल स्पोक को किसी छड़ चुम्बक की मदद से किस तरह चुम्बक बनाया जा सकता है। चुम्बक बनाने की जिस विधि की यहाँ बात हो रही है वो लगभग दो हज़ार साल पुरानी है। (उस समय किसी लोहे की सुई को चुम्बकित करने के लिए लोड-स्टोन का उपयोग किया जाता था। सोचिए, दो हज़ार साल पहले किसने लोड-स्टोन से लोहे की सुई को चुम्बकीय बनाने का यह तरीका खोजा होगा? या यह विचार किसके दिमाग में आया होगा?)

आपको एक या दो छड़ चुम्बक, एक लोहे की कील, ऑलपिन, सायकल का स्पोक आदि जुगाड़ना होगा। ये सब सामान आसानी-से घर पर या दुकान में मिल जाएगा। तो सबसे पहले कील या सायकल स्पोक को लीजिए और किसी समतल सतह जैसे फर्श या टेबल पर रख दीजिए। स्पोक के एक सिरे पर छड़ चुम्बक का 'एन' या 'एस' लिखा हुआ एक सिरा रखिए और स्पोक के दूसरे सिरे तक रगड़ते हुए लेकर जाएँ। दूसरे सिरे पर पहुँचने के बाद चुम्बक को हवा में उठा लीजिए और स्पोक के पहले सिरे पर ले आएँ। फिर से स्पोक पर रखकर रगड़ते हुए दूसरे सिरे तक लेकर जाएँ। फिर से चुम्बक को हवा में उठाकर पहले सिरे तक लेकर आना है (देखें चित्र-2)। इस तरीके से

चित्र-2

स्पोक को 25-30 बार चुम्बक के सिरे से अच्छे से रगड़िए।

अब देखते हैं कि क्या स्पोक चुम्बक बन पाया है या नहीं। कुछ ऑलपिन को स्पोक के पास लाकर देखिए कि क्या वे स्पोक से चिपकती हैं। स्पोक को घर के आसपास की मिट्टी या रेत पर फेरकर देखिए, क्या कुछ मिट्टी के कण या रेत कण भी स्पोक से चिपक रहे हैं। यदि ऑलपिन, लोहे की कील आदि स्पोक से चिपक रही है मतलब स्पोक में चुम्बकीय गुण आ गया है।

जब बचपन में मैंने इस तरीके से लोहे की कील को चुम्बक बनाया था तो रात में सोते समय मुझे यह डर सता रहा था कि कल सुबह कील का चुम्बकत्व खत्म हो जाएगा। हो सकता है, आपके मन में भी यह खयाल आए कि स्पोक कुछ समय बाद चुम्बक से साधारण स्पोक तो नहीं बन जाएगा। लेकिन फिक्र मत कीजिए, स्पोक का यह चुम्बकीय गुण कई दिनों तक बना रहेगा। और जब भी चाहें, आप इसी तरीके से स्पोक को फिर से चुम्बक तो बना ही सकते हैं।

विद्युत चुम्बक बनाना

विद्युत चुम्बक बनाना तब सम्भव हुआ जब इन्सान ने रासायनिक बैटरी या सेल बनाना सीख लिया। बैटरी या सेल से सीमित मात्रा में बिजली मिलने लगी। विद्युत की मदद से चुम्बक बनाने का तरीका हमने लगभग 200 साल पहले सीखा।

विद्युत चुम्बक बनाने के लिए ज़रूरी सामान इस प्रकार है - एक टॉर्च सेल, एनेमल चढ़ा तांबे का तार, 5 सेंटीमीटर लम्बी लोहे की कील, कुछ छोटी कील और ऑलपिन इकट्ठा कर लीजिए।

हो सकता है, घर पर सब सामान न मिल पाए। इसलिए बिजली वाली या पंखे की रिपेयरिंग वाली दुकान से आधा मीटर 24 गेज का एनेमल वाला तांबे का तार लीजिए। टॉर्च सेल और कील भी दुकान से ले सकते हैं।

कील पर पूरी लम्बाई में कागज़ का टुकड़ा लपेट लीजिए और फिर उस पर तांबे के तार के 50-60 घेरे लपेट लीजिए। इतना सेटअप बन जाने पर कील पर लिपटे तांबे के

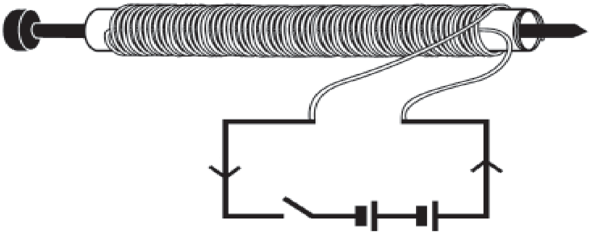

तार के दोनों सिरों को किसी गिट्टी या पत्थर से थोड़ा खुरचकर या तार को फर्श पर रगड़कर सिरे का एनेमल निकाल दीजिए।

अब दोनों सिरों को ड्राई सेल के धन व ऋण सिरों से जोड़ दीजिए।

तांबे के तार से लिपटी इस कील के पास दूसरी कील, ऑलपिन आदि लाने पर वे कील से चिपक जाएँगे। चिपकी हुई ऑलपिन के नीचे एक-एक कर ऑलपिन जोड़ते जाइए। आप कितनी ऑलपिन जोड़ पाए? सेल के सिरे पर छुला रहे तांबे के तार को हटा दीजिए। सारी ऑलपिन एकसाथ नीचे गिर जाएँगी। अब तांबे के तार में लिपटी कील एक सामान्य कील की तरह हो गई। सेल से फिर तार जोड़िए और कील के सिरे को रेत या सूखी मिट्टी पर ले जाकर देखिए कि क्या होता है?

अब कील पर लिपटे 50-60 घेरों में से 20-25 कम कर दीजिए। देखिए, क्या कील पहले की तरह ऑलपिन आदि को चिपका पा रही है?

यदि कील पर कुल 10-15 घेरे ही हों तो क्या होगा?

ऐसा क्यों हो रहा है, इसके बारे में थोड़ा सोचकर देखिए।

सायकल के स्पोक से बने चुम्बक से यह कील व तांबे के तार वाला चुम्बक किस तरह फर्क लग रहा है? अपने हाथों से करके देखते समय ऐसे कई सवाल मन में उठते हैं। लेकिन ये सवाल पाठ्यपुस्तकों के सवाल से हटकर होते हैं, तो हम उन पर सोचना बन्द कर देते हैं। ठीक वैसे ही जैसे इस सवाल पर कि चुम्बक में यह गुण कहाँ से आया।

* * *

उम्मीद है मेरे बचपन का यह किस्सा पढ़कर मज़ा आया होगा। यह सब पढ़ने व करने में मज़ा आना चाहिए और सोचने के लिए कुछ नया भी मिलना चाहिए। है न?

माधव केलकर: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

सभी चित्र रंजीत बालमुचु द्वारा बनाए गए हैं और कक्षा-6 की कार्य-पुस्तक *बाल वैज्ञानिक* से साभार।

एकलव्य फाउंडेशन के द्वारा विकसित विभिन्न सामग्री अब जेम मार्केटप्लेस पर उपलब्ध हैं

- चित्र कहानियाँ
- बोर्ड बुक्स
- लोक कथाएँ
- चित्र पुस्तकें
- कविताएँ
- खेल गीत
- अकॉर्डियन पुस्तकें
- बिग बुक
- बच्चों द्वारा सृजित पुस्तकें
- कविता/कहानियाँ/पोस्टर
- गतिविधि चार्ट
- ओरिगेमी पर आधारित किताबें
- शिक्षा साहित्य
- किशोर कथा साहित्य
- शिक्षकों के लिए विशेष मॉड्यूल
- करने और सीखने पर पुस्तकें
- प्रायमरी एवं माध्यमिक विज्ञान एजुकेशन किट
- प्रायमरी एवं माध्यमिक गणित एजुकेशन किट

विज्ञान एजुकेशन किट

इसके अलावा होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम, प्राथमिक शिक्षण कार्यक्रम और सामाजिक विज्ञान कार्यक्रम से सम्बन्धित सामग्री भी उपलब्ध है।

नीचे दिए गए लिंक और **QR** कोड के द्वारा आप एकलव्य फाउंडेशन के **जेम मार्केटप्लेस** के पेज पर पहुँचकर सामग्री ऑर्डर कर सकते हैं -

https://admin-mkp.gem.gov.in/admin/cat/catalog/angular_catalog/#!/catalog/index

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

फोनः **+91 755 297 7770-71-72;** मोबाइलः **877 952 1146**

www.eklavya.in | www.eklavyapitara.in

एकलव्य

आकाशीय पिण्डों की गति की व्याख्या

सूर्य और चन्द्र ग्रहण कब होते हैं?

उमा सुधीर

इस शृंखला की पिछली चार किश्तों में हमने आकाश में सूरज, चांद, और ग्रहों की आभासी गतियों को देखा और यह समझने की कोशिश की कि इनकी व्याख्या निम्नलिखित आधारों पर की जा सकती है:

- पृथ्वी के अपनी धुरी पर हर 24 घण्टे में एक बार घूम जाने (घूर्णन)
- चाँद की पृथ्वी के आसपास परिक्रमा; और
- पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों द्वारा सूर्य की परिक्रमा जिसमें ग्रहों की अपनी-अपनी परिक्रमा-अवधि होती है।

अलबत्ता, मैंने सबसे हैरतअंगेज़ नज़ारे को इस अन्तिम लेख के लिए बचा रखा था - सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण।

हमें बताया गया है कि जब चन्द्रमा की परछाई पृथ्वी के कुछ हिस्से पर पड़ती है तो सूर्यग्रहण होता है और जब पृथ्वी की परछाई चन्द्रमा पर पड़ती है तो चन्द्रग्रहण होता है। आकाशीय पिण्डों की गति सम्बन्धी इस अन्तिम लेख में मेरी योजना यह समझाने की है कि ये ग्रहण कैसे लगते हैं और कब लगते हैं।

चन्द्रग्रहण को देखना तो आसान है क्योंकि आप कहीं भी रहते हों, साल में एक चन्द्रग्रहण तो हो ही जाता है। हो सकता है, यह आंशिक (खण्डग्रास) हो या पूर्ण (खग्रास)। पूर्ण चन्द्रग्रहण के दौरान कम-से-कम कुछ समय के लिए पूरा-का-पूरा चन्द्रमा पृथ्वी की छाया में होता है जबकि आंशिक चन्द्रग्रहण के दौरान पूरे समय चन्द्रमा का कुछ हिस्सा प्रकाशित रहता है।

सूर्यग्रहण अपेक्षाकृत बिरली घटना होते हैं और अधिकांश सूर्यग्रहण आंशिक होते हैं। पूर्ण सूर्यग्रहण (जब कुछ समय के लिए पूरे-के-पूरे सूर्य को चन्द्रमा ढँक लेता है) के अलावा एक और किस्म का सूर्यग्रहण वलयाकार होता है। इसमें चन्द्रमा सूर्य को पूरा नहीं ढँकता बल्कि पूरे किनारे पर एक चमकीला छल्ला बना रहता है जबकि बीच में एक गहरा अँधेरा वृत्त मौजूद रहता है। सूर्यग्रहण चाहे जितने मोहक क्यों न हों, सूरज को सीधे निहारना आँखों के लिए घातक हो सकता है। तो जब मैं सूर्यग्रहण का अवलोकन करने की बात करती हूँ तो यह कदापि न समझना कि मैं आपको सूरज को

सीधे देखने के लिए कह रही हूँ (जो आपको कभी नहीं करना है)।[1]

हर अमावस्या को सूर्यग्रहण और हर पूर्णिमा की रात चन्द्रग्रहण क्यों नहीं दिखता?

जब कभी भी ये तीनों (सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी) एक सीधी रेखा पर होते हैं, तब चन्द्रमा या पृथ्वी की छाया दूसरे पर पड़नी चाहिए। अमावस्या के दिन चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी के बीच होता है और हमें सूर्यग्रहण दिखना चाहिए। इसी प्रकार से पूर्णिमा की रात पृथ्वी सूर्य और चन्द्रमा के बीच होती है और चन्द्रग्रहण नज़र आना चाहिए। तो फिर ये घटनाएँ इतनी दुर्लभ क्यों हैं? चूँकि हर महीने एक सूर्यग्रहण और एक चन्द्रग्रहण नहीं होता (याद रखें कि चन्द्रमा को पृथ्वी की एक परिक्रमा करने में लगभग एक महीना लगता है), तो इससे संकेत मिलता है कि ये तीन पिण्ड हर महीने एक सीध में नहीं होते। ऐसा क्यों होता होगा? इसकी सबसे सरल व्याख्या यह है कि पृथ्वी के चारों तरफ चन्द्रमा का परिक्रमा पथ और सूर्य के इर्द-गिर्द पृथ्वी की कक्षा एक ही तल में नहीं हैं। यही निष्कर्ष इस आधार पर भी निकाला जा सकता है कि चाँद हर दिन अलग-अलग बिन्दु से उदय होता है। और यदि हम अर्ध-चन्द्र (crescent moon) को क्षितिज के नज़दीक देखें और उसके नुकीले सिरों के बीच एक काल्पनिक रेखा खींचें, तो यह रेखा ज़्यादातर दिनों में क्षितिज के समान्तर नहीं होगी। विजय वर्मा ने *संदर्भ* में अपने लेख – चन्द्रमा की कलाएँ (*संदर्भ* अंक-26) – में इस बात को संक्षेप में समझाया है कि पृथ्वी के अलग-अलग स्थानों से देखने पर चन्द्रमा कैसा दिखाई देगा।

गतिविधि 1: इस गतिविधि के लिए आपको एक टॉर्च, एक ग्लोब और एक गेंद की ज़रूरत होगी (गेंद की साइज़ ग्लोब से आधी हो तो बेहतर होगा, ग्लोब से बड़ी तो कदापि न हो)। यह गतिविधि किसी अँधेरे कमरे में सर्वोत्तम होगी। टॉर्च को कहीं जमा दीजिए ताकि उसकी रोशनी स्थिर रहे और उसे ग्लोब की ऊँचाई के बराबर रखिए। ग्लोब को टॉर्च से कुछ दूरी पर रखें ताकि टॉर्च की रोशनी ग्लोब पर पड़े। लेकिन टॉर्च और ग्लोब के बीच इतनी दूरी रहे कि आप गेंद (जो चाँद का प्रतिनिधित्व करेगी) को पृथ्वी के आसपास चक्कर लगवा

[1] *ऐसी विशेष रूप से गहरे रंग में बनाई गई फिल्में मिलती हैं जिनके माध्यम से सूर्यग्रहण के दौरान सूरज को देखा जा सकता है। लेकिन इन्हें सावधानी से सहेजकर रखना पड़ता है क्योंकि इन पर किए गए लेप पर खरोंचें पड़ सकती हैं। इसलिए इस्तेमाल करने से पहले बेहतर होगा कि किसी चमकीले प्रकाश स्रोत को इस पट्टी में से देखकर तसल्ली कर लें कि कहीं से प्रकाश की लकीरें तो नहीं दिख रही हैं। सूर्यग्रहण को देखने का एक और तरीका है कि पिन होल कैमरे की मदद ली जाए और सूर्य के प्रतिबिम्ब को पिन होल कैमरे के पर्दे पर देखा जाए।*

सकें। अब गेंद को ग्लोब के आसपास अलग-अलग तलों में परिक्रमा करवाइए।

पहला – एक ऐसा तल जो फर्श या जिस मेज़ पर आपने ग्लोब को रखा है, उसकी सतह के समान्तर हो। यह सुनिश्चित कीजिए कि गेंद (चन्द्रमा) और ग्लोब (पृथ्वी) इतने निकट हों कि उनकी छाया एक-दूसरे पर पड़ सके।

आप देखेंगे कि जब आप गेंद को ऐसे तल में चक्कर कटवाते हैं जो उस सतह के समान्तर हो जिस पर ग्लोब रखा गया है, तो हर बार जब गेंद टॉर्च और ग्लोब के बीच में आती है तो गेंद की परछाई ग्लोब पर दिखती है (चित्र-1 क)। आप यह भी देख सकते हैं कि यह जगह अमावस्या के दिन से मेल खाती है क्योंकि गेंद (चाँद) का प्रकाशित भाग ग्लोब (पृथ्वी) से विपरीत ओर होता है। यह वह स्थिति है जब परछाई वाले क्षेत्र में रहने वाले लोग सूर्यग्रहण देख पाएँगे।

इसी प्रकार से, जब ग्लोब (पृथ्वी) टॉर्च और गेंद के बीच होता है, तो ग्लोब की परछाई गेंद पर पड़ती है। यह वह स्थिति है जब चन्द्रग्रहण देखा जा सकेगा।

दूसरा – गेंद को एक ऐसे तल में घुमाइए जो उस सतह के सापेक्ष झुका हुआ हो जिस पर ग्लोब रखा है (चित्र-1 ख)। इस मामले में, आप शायद अधिक तल नहीं ढूँढ पाएँगे जहाँ 'ग्रहण' होंगे। इस तल का कोण न सिर्फ ग्लोब के सापेक्ष बल्कि कमरे की एक-दो अन्य वस्तुओं के सापेक्ष भी नोट कीजिए। अगली गतिविधि में आपको इसकी ज़रूरत पड़ेगी।

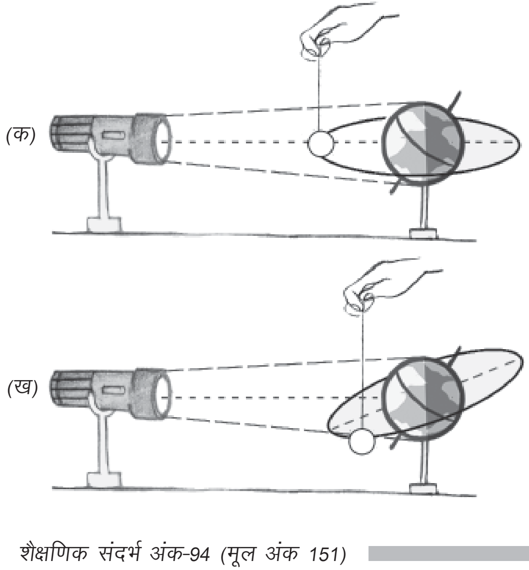

चित्र-1: *जब पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा की कक्षा का तल क्रान्तिवृत्त (ecliptic) के तल के समान हो, तो हमें पृथ्वी पर किसी-न-किसी स्थान से हर महीने सूर्य और चन्द्र ग्रहण देखने में सक्षम होना चाहिए। लेकिन चूँकि चन्द्रमा की कक्षा वास्तव में क्रान्तिवृत्त से लगभग 5 डिग्री झुकी हुई है, इसलिए ग्रहण दुर्लभ हैं।*

आप देख सकेंगे कि इन सब तलों के लिए भी हर 'अमावस्या' के दिन सूर्यग्रहण होगा और हर 'पूर्णिमा' की रात चन्द्रग्रहण होगा। अर्थात् ऐसा लगता है कि इस मामले में आपको वास्तविकता की तुलना में कहीं अधिक ग्रहण दिखाई देंगे। तो हो क्या रहा होगा?

जिस तल में चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है, वह पृथ्वी की परिक्रमा कक्षा (ecliptic) के तल के सापेक्ष 5 डिग्री से अधिक झुका हुआ है (चित्र-2)। जब पृथ्वी सूर्य के आसपास चक्कर लगाती है तो चन्द्रमा के इस झुके हुए तल को क्या होता है? क्या यह तल सूर्य का चक्कर काटते हुए अपने झुकाव की दिशा बदलता है? याद रहे, आपका अन्दाज़ा जो भी हो, आपको उसे अवलोकनों के आधार पर जाँचना होगा। और इस सन्दर्भ में प्रासंगिक अवलोकन क्या हैं? यह कि ग्रहण वास्तव में काफी दुर्लभ घटनाएँ हैं।

गतिविधि 2: न सिर्फ चन्द्रमा पृथ्वी के चक्कर काटता है, बल्कि पृथ्वी भी सूर्य की परिक्रमा करती है। आइए, अपने टॉर्च-ग्लोब-गेंद के मॉडल से इस स्थिति को पुनर्निमित करने की कोशिश करते हैं। पिछली गतिविधि में

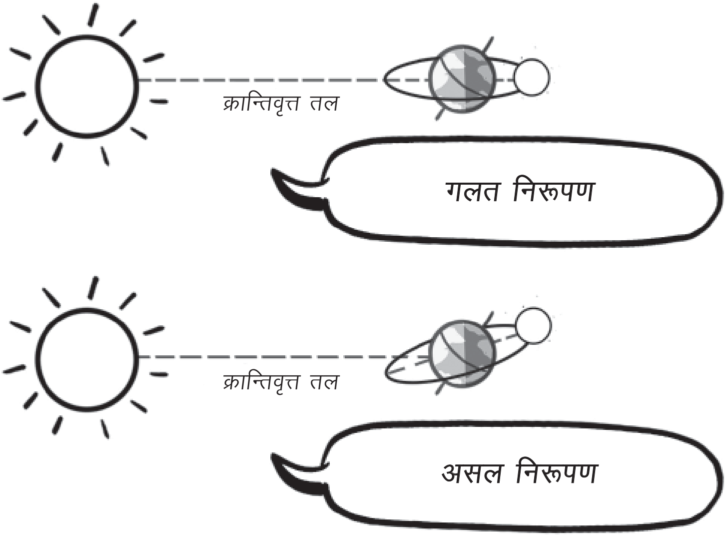

***चित्र-2:** चूँकि पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा की कक्षा क्रान्तिवृत्त के समान तल में नहीं है, इसलिए सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी कभी-कभी ही एक सीधी रेखा में होते हैं तब ग्रहण सम्भव होता है।*

विभिन्न प्रकाश स्रोतों द्वारा निर्मित परछाइयाँ

क) प्रकाश का बिन्दु स्रोत - यदि हमारे पास प्रकाश का एक बिन्दु स्रोत हो - यानी एक ऐसा स्रोत है जिसमें प्रकाश एक बिन्दु से चारों ओर फैलता है - तो ये किरणें एक-दूसरे से दूर जाएँगी और इन प्रकाश किरणों के मार्ग में आने वाली किसी भी वस्तु की परछाई का आकार इस बात पर निर्भर करेगा कि वह वस्तु प्रकाश स्रोत के कितनी नज़दीक है। ऐसा तब भी दिखेगा जब प्रकाश स्रोत सटीक रूप से एक बिन्दु न हो लेकिन प्रकाश की किरणें स्रोत से निकलने के बाद एक-दूसरे से दूर जा रही हों।

उदाहरण के लिए, यदि हम एक मोमबत्ती जलाएँ और दीवार पर अपनी हथेली की परछाई को देखें, तो साफ दिखेगा कि हथेली को मोमबत्ती के निकट लाने पर परछाई बड़ी होती जाती है (चित्र-3)।

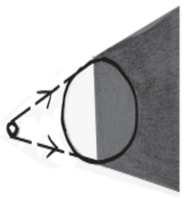

प्रकाश का बिन्दु स्रोत

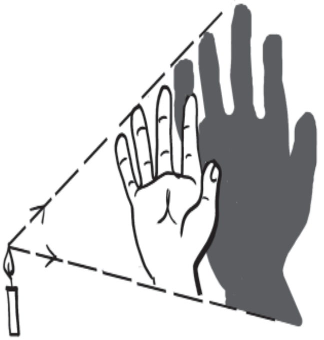

छाया का आकार प्रकाश स्रोत से दूरी के साथ बदलता रहता है

चित्र-3: *जब प्रकाश किरणें स्रोत से फैलती हैं, तो इन किरणों के मार्ग में किसी वस्तु द्वारा बनी छाया का आकार इस बात पर निर्भर करता है कि वह प्रकाश के स्रोत के कितना करीब है (या वस्तु स्क्रीन से कितनी दूर है)।*

ख) प्रकाश की समान्तर किरणें - कल्पना कीजिए कि हम यही प्रयोग सूर्य को प्रकाश स्रोत लेकर करते हैं; इस मामले में हथेली को पर्दे से दूर या पास लाने पर (दूसरे शब्दों में, हथेली को सूर्य से पास या दूर करने पर) परछाई के आकार में कोई परिवर्तन नहीं दिखेगा। इसीलिए हम यह कथन प्राय: सुनते हैं कि सूर्य से आने वाली प्रकाश किरणें समान्तर होती हैं। इस लेख में हम इस कथन की सीमाएँ देखेंगे। (चित्र-4)

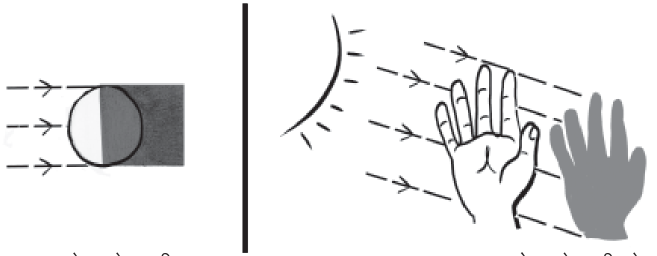

बहुत दूर से आने वाली प्रकाश की समानान्तर किरणें

छाया का आकार प्रकाश स्रोत से दूरी के साथ बदल नहीं रहा है

चित्र-4: जब प्रकाश किरणें एक-दूसरे के समानान्तर होती हैं, तो छाया का आकार प्रकाश स्रोत से वस्तु की दूरी, या स्क्रीन और वस्तु के बीच की दूरी पर निर्भर नहीं करता है।

ग) प्रकाश का विस्तारित स्रोत – यथार्थ में प्रकाश का बिन्दु स्रोत हासिल करना मुश्किल है। हमें उपलब्ध अधिकांश स्रोत थोड़े अलग होते हैं। उदाहरण के लिए ट्यूबलाइट को लीजिए। यदि हम दीवार पर बनने वाली हथेली की परछाई को देखें, तो उसके किनारे थोड़े धुँधले-से होते हैं, और हमारा हाथ दीवार से जितना अधिक दूर होता है, किनारे उतने ही धुँधले होते जाते हैं (चित्र-5)। ऐसी परछाई

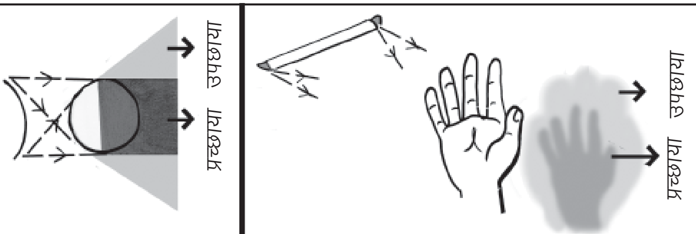

प्रकाश का विस्तारित स्रोत

छाया धुँधली होती है और आकार प्रकाश स्रोत से दूरी के अनुसार बदलता रहता है

चित्र-5: जब प्रकाश का एक विस्तारित स्रोत होता है, तो छाया की रूपरेखा धुँधली हो जाती है क्योंकि किनारों पर प्रकाश स्रोत के कुछ हिस्से से प्रकाश वस्तु द्वारा अवरुद्ध हो रहा है। इससे हमें छाया में दो भाग मिलते हैं, एक गहरा केन्द्रीय क्षेत्र जिसे प्रच्छाया कहा जाता है और एक कम गहरा बाहरी क्षेत्र जिसे उपछाया कहा जाता है। उनका सापेक्ष अनुपात इस बात पर निर्भर करेगा कि प्रकाश स्रोत कितना बड़ा है।

के घने भाग को प्रच्छाया (umbra) तथा हल्के वाले भाग को उपछाया (penumbra) कहते हैं। दरअसल, हो यह रहा है कि प्रकाश स्रोत के किसी भी हिस्से का प्रकाश प्रच्छाया नामक हिस्से पर नहीं पड़ रहा है जबकि उपछाया आंशिक रूप से

प्रकाशित है – स्त्रोत के कुछ हिस्सों से आने वाला प्रकाश यहाँ पहुँच रहा है, लेकिन अन्य हिस्सों का नहीं (चित्र-6)।

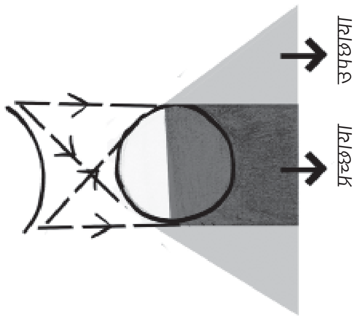

चित्र-6: प्रकाश के एक विस्तारित स्त्रोत द्वारा प्रच्छाया और उपछाया का निर्माण - जब प्रकाश स्त्रोत के कुछ हिस्सों से प्रकाश किरणें वस्तु द्वारा अवरुद्ध हो जाती हैं, तो उस क्षेत्र की तुलना में कम घनी छाया (penumbra) बनती है, जहाँ पूरे प्रकाश को वस्तु द्वारा अवरुद्ध कर दिया गया हो (umbra)।

ग्रहण के क्रम की व्याख्या करते हुए हमें सूर्य को प्रकाश का एक विस्तारित स्त्रोत मानना होगा और हम देख पाएँगे कि पूर्ण व आंशिक ग्रहण के दौरान प्रच्छाया और उपछाया किस तरह प्रकट होते हैं।

(प्रकाशिकी की विभिन्न अवधारणों की विस्तृत चर्चा के लिए *एकलव्य* द्वारा प्रकाशित 'प्रकाश' मॉड्यूल देखिए।)

यह देखा गया था कि चन्द्रमा की कक्षा का कौन-सा तल हमें सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण, दोनों दे देता है। अब ग्लोब को चलाइए ताकि वह टॉर्च के चारों तरफ अपनी काल्पनिक कक्षा में तीन माह बाद की स्थिति में आ जाए। आपको टॉर्च को घुमाना पड़ेगा ताकि उसका प्रकाश ग्लोब पर पड़ता रहे। अब 'चन्द्रमा' को चलाकर उपयुक्त स्थिति में लाइए और उसे ग्लोब की परिक्रमा एक ऐसे तल में करवाइए जिसका कोण पहले जितना ही हो (चित्र-7)।

क्या आपको अभी भी 'अमावस्या' की स्थिति में गेंद की परछाई ग्लोब पर पड़ती दिखती है और 'पूर्णिमा' की स्थिति में ग्लोब की परछाई गेंद पर पड़ती दिखती है? आप पाएँगे कि ऐसा होने के लिए आपको गेंद की कक्षा का तल बदलना होगा।

अर्थात्, यदि पृथ्वी-चन्द्रमा तंत्र द्वारा सूर्य की परिक्रमा करते हुए

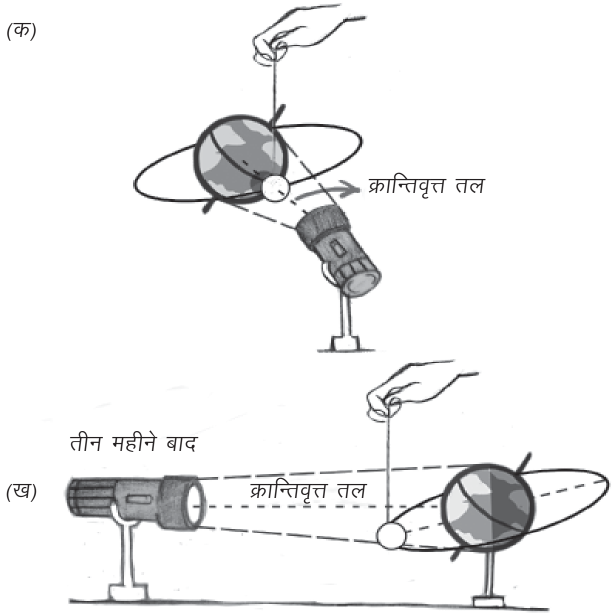

चित्र-7 (क): *अगर हम एक गेंद को ग्लोब के चारों तरफ ऐसे घुमाते हैं कि उसके कक्ष का तल समतल से कुछ झुका होता है, तो हम देख पाते हैं कि हर बार गेंद टॉर्च की रोशनी को रोककर ग्रहण की स्थिति नहीं बनाती। जिस भी स्थिति में गेंद की परछाई ग्लोब पर पड़ती है, हमें वो तल नोट कर लेना चाहिए।*

(ख): *ऊपर निश्चित किए गए तल को बरकरार रखते हुए अगर हम टॉर्च को घुमाते हैं और ऐसी स्थिति दर्शाने की कोशिश करते हैं जिसमें तीन महीने बाद पृथ्वी की कक्षा की स्थिति को इंगित किया जाए, तो हम देख सकते हैं कि पूर्णिमा और अमावस्या के दिनों में, सूर्य (टॉर्च) और पृथ्वी (ग्लोब) हमेशा क्रान्तिवृत्त के ऊपर या नीचे जाते चन्द्रमा के साथ एक सीधी रेखा में नहीं होंगे।*

चन्द्रमा का तल डगमगाता रहता, तो हमें वास्तविकता से कहीं ज़्यादा ग्रहण देखने को मिल सकते थे। इस श्रृंखला के चौथे लेख में, जहाँ हम सूर्य की परिक्रमा करती हुई पृथ्वी के अक्ष के झुके होने की बात कर रहे थे, मैंने ज़िक्र किया था कि कोणीय संवेग का संरक्षण सूर्य की परिक्रमा करती पृथ्वी के अक्ष की दिशा में परिवर्तन का विरोध करता है। इसी प्रकार से, वही सिद्धान्त पृथ्वी-चन्द्रमा तंत्र द्वारा सूर्य की परिक्रमा के दौरान चन्द्रमा के कक्ष के तल के झुकाव को भी स्थिर रखता है।

ग्रहण के दौरान प्रच्छाया और उपछाया

चन्द्र व सूर्यग्रहण, दोनों के दौरान आसान-से अवलोकन पृथ्वी और

चन्द्रमा, दोनों की प्रच्छाया और उपछाया की उपस्थिति दर्शाते हैं। दोनों मामलों में दिखने वाले प्रभाव थोड़े अलग-अलग होते हैं। सूर्यग्रहण के समय हम चन्द्रमा की परछाई में होते हैं, जबकि चन्द्रग्रहण के समय हम पृथ्वी की परछाई को चन्द्रमा की सतह पर चलते देखते हैं।

चन्द्रग्रहण के दौरान पहले चन्द्रमा पृथ्वी की परछाई के उपछाया वाले भाग से गुज़रता है और फिर प्रच्छाया में प्रवेश करता है। उपछाया में, चूँकि सूर्य से आने वाला कुछ प्रकाश चन्द्रमा पर पड़ रहा है, परछाई उतनी सघन नहीं होती है और लगता है कि चाँद की सतह पर लाल-सा रंग गुज़र रहा है। अलबत्ता, जब चन्द्रमा प्रच्छाया में प्रवेश कर जाता है, तब उस पर सूर्य का कोई प्रकाश नहीं पहुँचता और वह पूरी तरह अन्धकार में होता है। इसके बाद चन्द्रमा एक बार फिर दूसरी ओर स्थित उपछाया वाले भाग से गुज़रता है एवं इसलिए लालिमा लिए दिखता है, और उसके बाद एक बार फिर पूर्णिमा का आलीशान चाँद नज़र आने लगता है।

सूर्यग्रहण के दौरान हम देखते हैं कि सूर्य की सतह पर एक काला चाप गुज़रता है और धीरे-धीरे उसे पूरा ढँक लेता है। पूर्ण सूर्यग्रहण चन्द मिनटों के लिए ही रहता है, और फिर से हम काले चाप को सूर्य की सतह से हटते हुए देखते हैं। अर्थात्, पूर्णता के समय हम चन्द्रमा की परछाई के प्रच्छाया वाले भाग में होते हैं। जब हम सूर्य का कुछ हिस्सा देख सकते हैं तब हम चन्द्रमा की परछाई की उपछाया में होते हैं जहाँ सूर्य के कुछ हिस्से का प्रकाश हम तक पहुँचता है जबकि शेष प्रकाश को चन्द्रमा रास्ते में आकर रोक लेता है।

लेकिन यदि हम इसी घटना का उपग्रह चित्र देखें तो नज़र आएगा कि ग्रहण के दौरान पृथ्वी का कुछ

प्रकाश के स्रोत के रूप में सूर्य

हम सूर्य या अन्य किसी प्रकाश के स्रोत को समान्तर किरणों का स्रोत मानें, एक बिन्दु स्रोत मानें या उसे एक विस्तारित स्रोत मानें – यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम किस पैमाने की परिघटना को समझने की कोशिश कर रहे हैं। पृथ्वी की सतह पर, जब हम सूरज की रोशनी में छोटी-छोटी वस्तुओं की परछाइयाँ देख रहे हों, तब किरणें विचलित होकर समान्तर से बहुत दूर नहीं जातीं और इस विचलन को नगण्य माना जा सकता है। यानी किरणें एक-दूसरे से दूर तो जाती हैं लेकिन माना जा सकता है कि लगभग समान्तर ही बनी रहती हैं। अलबत्ता, जब हम पृथ्वी या चाँद की परछाइयों की बात करते हैं, तो सूर्य को प्रकाश का एक विस्तारित स्रोत मानना ज़रूरी हो जाता है जिससे निकलने वाली प्रकाश किरणें समान्तर नहीं हैं।

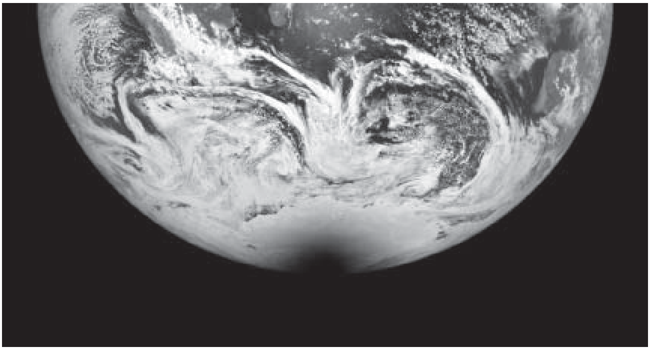

चित्र-8: सूर्यग्रहण की सैटेलाइट तस्वीर जिसमें चन्द्रमा की प्रच्छाया और उपछाया को देखा जा सकता है। प्रच्छाया के नीचे का क्षेत्र पूर्ण सूर्यग्रहण का अनुभव करेगा, जबकि उपछाया क्षेत्र में लोग आंशिक सूर्यग्रहण देखेंगे।

हिस्सा चाँद की परछाई से ढँका है और यह परछाई किनारों पर थोड़ी हल्की है (चित्र-8)। दरअसल, उपग्रह से ली गई तस्वीर हमें सूर्यग्रहण के दौरान पृथ्वी को ठीक उसी तरह देखने की गुंजाइश देती है जिस तरह हम ग्रहण के दौरान चन्द्रमा को देखते हैं।

परछाई के गहरे काले हिस्से में खड़े लोग पूर्ण सूर्यग्रहण का आनन्द उठाएँगे।

आप सोच रहे होंगे कि ऐसा क्यों होता है कि सूर्यग्रहण पृथ्वी के कुछ भागों से ही दिखाई देता है। जैसा कि चित्र में दिख रहा है, चन्द्रमा की परछाई पृथ्वी के एक छोटे हिस्से पर ही पड़ रही है जबकि चन्द्रग्रहण के दौरान पूरा-का-पूरा चाँद ही पृथ्वी की परछाई में आ जाता है। ध्यान रखें, पृथ्वी की तुलना में चन्द्रमा बहुत छोटा है (चित्र-9)।

पूर्ण व वलयाकार सूर्यग्रहण कैसे बनते हैं?

ज़रा पिछले लेख पर लौटिए जहाँ हमने सूर्य के इर्द-गिर्द पृथ्वी की कक्षा की दीर्घवृत्ताकार प्रकृति की चर्चा की थी। इसका मतलब है कि पृथ्वी सालभर सूर्य से एक-जैसी दूरी पर नहीं रहती। कभी-कभी वह अन्य दिनों के मुकाबले सूर्य के अधिक नज़दीक रहती है (जनवरी में)। और सूर्य व पृथ्वी की दूरी में यह भिन्नता लगभग 3 प्रतिशत की है। देखा जाए, तो दूरी में इस अन्तर का पृथ्वी पर पहुँचने वाले सौर विकिरण की मात्रा पर कोई खास अन्तर नहीं पड़ता। और, सालभर में सूर्य की प्रेक्षित साइज़ में कोई अन्तर नहीं दिखता।

लेकिन पृथ्वी के आसपास चन्द्रमा की दीर्घवृत्ताकार कक्षा की वजह से चन्द्रमा के आकार पर स्पष्ट असर

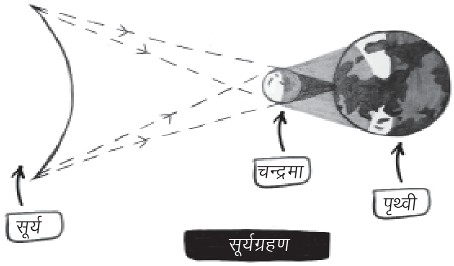

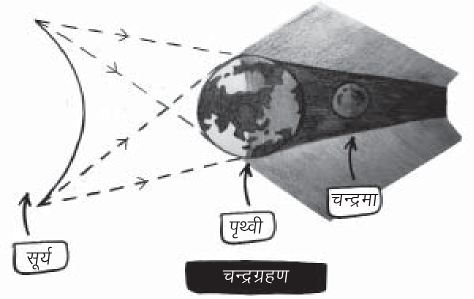

चित्र-9: चूँकि चन्द्रमा पृथ्वी से बहुत छोटा है, इसलिए इसकी छाया भी छोटी होती है। इसलिए सूर्यग्रहण एक छोटे इलाके में एवं अल्पकालिक होते हैं। इसके विपरीत, चन्द्रमा को पृथ्वी की बहुत बड़ी छाया से गुज़रने में अधिक समय लगता है और इसलिए चन्द्रग्रहण घण्टों तक चलता है।

देखा जा सकता है।[2] इस बात को खास तौर से पूर्णिमा के दिन देखा जा सकता है – किसी-किसी पूर्णिमा के दिन चाँद अपेक्षाकृत बड़ा दिखता है और उसे 'सुपरमून' कहते हैं। चाँद के आभासी आकार में इस अन्तर का असर ग्रहणों पर भी पड़ता है। यदि सूर्यग्रहण उस दिन हो जब चन्द्रमा पृथ्वी के नज़दीक है, तो उस दिन चन्द्रमा का आभासी आकार इतना बड़ा होता है कि वह सूर्य की तश्तरी को पूरा ढँक लेता है और परिणाम होता है पूर्ण (खग्रास) सूर्यग्रहण। लेकिन यदि चन्द्रमा अधिक दूरी पर है तो वह अपेक्षाकृत छोटा दिखेगा। और चाँद की परछाई का प्रच्छाया वाला हिस्सा पृथ्वी तक फैलता नहीं है और यहाँ से देखने पर चन्द्रमा पूरे सूर्य को नहीं ढँक पाएगा। और ऐसी स्थिति में जब वह ठीक केन्द्र में होगा तो सूर्य की एक पतली-सी परिधि उसके अँधेरे भाग के आसपास नज़र आएगी और हमें चमकती रिंग जैसा वलयाकार सूर्यग्रहण दिखाई देगा।

चूँकि पूर्ण सूर्यग्रहण के समय चन्द्रमा सूर्य से आने वाले समस्त प्रकाश को रोक देता है, तो काफी अँधेरा हो जाता है (रात के घुप अँधेरे जैसा तो नहीं और क्षितिज तो उज्जवल रहता है)। मुझे याद है कि 2009 के पूर्ण सूर्यग्रहण के समय पक्षियों ने क्या कोलाहल मचाया था।

[2] पृथ्वी और चाँद के बीच की दूरी में भिन्नता लगभग 11 प्रतिशत रहती है।

यह सूर्यग्रहण सुबह-सुबह हुआ था। बेचारे पक्षी अभी-अभी तो जागे थे और फिर अचानक अँधेरा छाने लगा था। उन्हें ज़रूर अचम्भा हुआ होगा कि दिन को क्या हुआ। वे शायद इस बात पर रोष जता रहे होंगे कि अभी तो उन्हें ठीक-ठाक भोजन भी नसीब नहीं हुआ था!

वलयाकार सूर्यग्रहण के दौरान भी, दिन का उजाला काफी मद्धिम हो जाता है, हालाँकि अँधेरा तो नहीं होता। जो बात स्पष्ट होती है, वह है दिन-दहाड़े तापमान में अचानक गिरावट महसूस होना; कन्याकुमारी में जनवरी 2010 में हुए वलयाकार सूर्यग्रहण के समय ऐसा ही हुआ था।

मनुष्यों को यथासम्भव अधिक-से-अधिक खग्रास सूर्यग्रहणों का लुत्फ उठाना चाहिए – जल्दी ही हमें सिर्फ वलयाकार सूर्य ग्रहण ही नज़र आएँगे क्योंकि चन्द्रमा धीरे-धीरे हमसे दूर जा रहा है। यकीनन, यहाँ 'जल्दी' का मतलब ब्रह्माण्डीय पैमाने पर है। ऐसा अनुमान है कि अन्तिम पूर्ण सूर्यग्रहण आज से करीब 65 करोड़ वर्ष बाद होगा। तुलना के लिए देखें कि बहुकोशिकीय जीवों को विकसित होकर मनुष्य का रूप लेने में भी लगभग इतना ही समय लगा था। तो हो सकता है कि पूर्ण सूर्यग्रहण पर पूर्ण विराम लगने के समय आँसू बहाने के लिए कोई इन्सान हो ही नहीं।

उमा सुधीर: *एकलव्य* के साथ जुड़ी हैं। दो दशक से विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में काम कर रही हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

चित्र: मधुश्री: फ्रीलांस चित्रकार व परफॉर्मर। बच्चों व वयस्कों, दोनों के लिए कहानियाँ कहने की विभिन्न कथात्मक, चित्रात्मक व अभिनय की शैलियों में रुचि।

आभार: मेरी स्कूली शिक्षा हर किसी के समान ही रही है। सौर मण्डल के बारे में मैं जो कुछ भी जानती हूँ, लगभग वह सब कुछ मैंने *एकलव्य* में शामिल होने और प्रोफेसर विजय एस. वर्मा, कमल महेंद्रू और दिवंगत विनोद रायना द्वारा आयोजित सत्रों में भाग लेने के बाद सीखा है। इसके अलावा, विभिन्न सत्रों की योजना के दौरान अमिताभ मुखर्जी, अरविंद सरदाना, सी.एन. सुब्रमण्यम, भास बापट, हिमांशु श्रीवास्तव और अनीश मोकाशी के साथ चर्चा से मेरे दिमाग में कई मुद्दों पर स्पष्टता आई है। आकाश को दूरबीन के माध्यम से देखने की खुशी से परिचित कराने के लिए मेरे दिवंगत मित्र विवेक को और विभिन्न आकाश-अवलोकन मोबाइल ऐप से परिचित कराने के लिए संकेत और दिवाकर को विशेष धन्यवाद। मेरी टीम के सदस्यों और विभिन्न कार्यशालाओं के प्रतिभागियों के प्रश्नों से भी भ्रामक बिन्दुओं को पहचानने में मदद मिली और मैंने अपनी सर्वोत्तम क्षमता से इनका समाधान करने का प्रयास किया है। अभी भी बहुत कुछ है जिसे मुझे समझने की ज़रूरत है, और जब मैं ऐसा करूँगी तो हो सकता है कि आपको इस विषय पर मेरे द्वारा लिखे गए कुछ और अधिक लेख पढ़ने को मिलें!

क्या जैव विविधता राजनीति विज्ञान की शिक्षा प्रदान कर सकती है?

यूवान एविस

एक काले सिर वाला ओरियोल बैंगन के खेत के बीचों-बीच लगे एक पपीते के पेड़ पर मँडरा रहा था, उस पर लगे एक अधपके पपीते को कुतर रहा था और शाख पर बैठे हुए अपने चूज़ों को खिला रहा था। थोड़ी देर बाद वयस्क पक्षी उड़कर पास के एक आँवले के पेड़ पर चला गया और कनखियों से चूज़ों को देखता रहा, जैसे यह देख रहा हो कि क्या वे खुद से भोजन कुतरना शुरू करेंगे।

अक्टूबर, 2022 के अन्त में, पल्लुयिर ट्रस्ट से हम चार प्रकृति शिक्षक स्थानीय बच्चों के साथ गतिविधियाँ करने के लिए पूरे दो दिन कोयंबतूर, तमिलनाडु के पिचनूर गाँव में थे। पहले दिन हम पक्षी देखने गए (जहाँ हमने काले सिर वाले ओरियोल का व्यवहार बारीकी-से निहारा), नेचर जर्नलिंग की और दोपहर में कुछ खेल खेले। लगभग 50 बच्चे आए थे - कुछ बच्चे पिचनूर और आसपास के गाँवों से थे और कुछ गाँव से थोड़ा बाहर बसी एक आदिवासी बस्ती से। जातिगत विभाजन इस क्षेत्र में, यहाँ तक कि बच्चों में भी, इतनी गहराई तक व्याप्त है कि एक बाहरी व्यक्ति होने के बावजूद मुझे भी यह थोड़ा-थोड़ा समझ आ रहा था। लेकिन यह खुलकर सामने तब आया जब बच्चे दोपहर का खाना खाने के लिए अलग-अलग बैठे। और तब, जब मैंने उन्हें छोटे समूह बनाकर उनमें बैठाने की कोशिश की तो कुछ बच्चे न तो अपनी जगह से हिले, न ही समूह में आए। इसलिए समूह बनाने का काम मैंने शिक्षक पर छोड़ दिया।

तितलियाँ साथ-साथ

अगला आधा दिन बच्चों की प्रिय फरमाइश तितलियों के लिए था। सुबह हम गाँव के बाहरी इलाके में लम्बी सैर पर निकल गए थे, हाथ में फील्ड गाइड और अवलोकन तालिका लेकर तितलियाँ ढूँढने। हमने कॉमन बैंडेड पीकॉक तितलियों (तमिल में, मय़िल अज़गी) को गीली लाल मिट्टी के ढेर पर मिट्टी से पोषण चूसते (मड-पडलिंग करते) हुए देखा। एक बड़े पंखों वाली सहयाद्री तितली (सदर्न बर्डविंग, पोन्नअज़गी) नारियल के बगीचों के ऊपर गश्त लगा रही थी और जब भी वह हमारे सर के

पिचनूर गाँव में तितलियाँ ढूँढते और उनका अवलोकन करते हुए।

ऊपर से गुज़रती थी तो बहुत ही उत्साहित शोर मच उठता था। बगीचों और खाली पड़ी ज़मीन के आसपास पगडण्डियों के किनारों पर बहुत सारी चार छल्लों वाली (फोर-रिंग, नांग वेळयन्) तितलियाँ ज़मीन के करीब, खासकर किनारों पर उगी घास पर, हौले-हौले पंख फड़फड़ाते उड़ रही थीं। हमने अकाव (आक, कैलोट्रॉपिस) और नींबू के पेड़ पर क्रमशः प्लेन टाइगर (वेंदय वरियन्) और लाइम तितली (एलुमिच्चई अज़गी) का पूरा जीवन-चक्र भी देखा। अन्त में हम अपनी खोजों, अवलोकनों और सवालों को साझा करने, और एक-दूसरे को सुनने के लिए कुमिट्टीपति नदी के किनारे जा बैठे। कुछ बच्चों ने 25 से अधिक प्रजातियाँ देखी/पहचानी थीं। उसी दिन बाद में, उनकी एक अध्यापिका संध्या ने हमारे साथ भावविभोर हो अपना अनुभव साझा किया कि जाने कैसे, इस गतिविधि के दौरान बच्चों ने धीरे-धीरे एक-दूसरे से बात करना शुरू कर दिया था, और बीच गतिविधि तक आते-आते वे एक-दूसरे से खुलकर बातचीत करने लगे थे, एक-दूसरे को खोजने, पहचानने और निरीक्षण करने में मदद कर रहे थे। उन्होंने साझा किया कि यहाँ के सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ के चलते कक्षा में ऐसा माहौल बनाने के लिए वे रोज़ाना संघर्षरत रहती हैं।

चेन्नई लौटने के बाद मुझे इस घटना ने कई दिनों तक सोच में डुबोए रखा। तितलियों, पक्षियों या

पेड़ों को निहारने की प्रकृति में ऐसा क्या था जो, चाहे सिर्फ चन्द घण्टों के लिए ही सही, इस गहराई से पैठे सामाजिक भेद को मिटा पाया था? क्या बात सिर्फ इतनी थी कि एकसाथ तितली को देखते समय जाति अप्रासंगिक थी? या अधिक महत्वपूर्ण रूप से, क्या ध्यान देने, कुछ जानने और सवाल उठाने के लिए हमें सामाजिक संरचना को छोड़ना होगा? यदि नहीं तो क्या उन संरचनाओं को भी अवलोकन में शामिल करना होगा, और मानवीय रूप से बराबरी के स्तर पर पहुँच जाना होगा? बारीक अवलोकन करने और अन्य प्राणियों से जुड़ने से सम्बन्धित कुछ या कई बातें शायद हमें इन्सानों से भी जोड़ सकती हैं।

प्रकृति अवलोकन से संवेदनशीलता

एक महीने बाद, मैं अबेकस मोंटेसरी स्कूल के शिक्षकों के साथ स्कूली शिक्षा के एक प्रमुख घटक के रूप में जलवायु साक्षरता को एकीकृत करने के सम्भावित तरीके साझा कर रहा था। समापन चर्चा के दौरान मेरी सहयोगी कावेरी, जो मानविकी और राजनीति विज्ञान की शिक्षिका हैं, ने एक बहुत ही दिलचस्प बात कही। उन्होंने देखा है कि उनके नौवीं कक्षा के बच्चे, जो प्राथमिक कक्षा से ही ‘कृषि, पर्यावरण और समाज कार्यक्रम’ (जिसे शिक्षकों के साथ मिलकर डिज़ाइन करता हूँ) में शामिल रहे थे, वे अन्य कक्षाओं के बच्चों की तुलना में कहीं अधिक राजनीतिक, सक्रिय चर्चाकर्ता और खुद-ब-खुद सोच-विचार करने वाले बन गए थे। पता नहीं कैसे पर उनमें इससे बदलाव आया था - पिछले तीन वर्षों के दौरान अनुभव की गई प्रकृति-आधारित शिक्षण पद्धति से, जिसमें अधिकांश मॉड्यूल चेन्नई में जैव-विविधता का अवलोकन करने पर केन्द्रित थे। बच्चे इन तौर-तरीकों को जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी उपयोग करने लगे थे। कावेरी ने भी स्वतंत्र रूप से यह कहा कि ‘प्रकृति के बारीक अवलोकन के कौशल का अभ्यास करने में ऐसा कुछ है’ जो समाज और इतिहास से बच्चों को जोड़ता है और इन पर चिन्तन करवाता है। दिसम्बर में, बैंगलुरू में दूसरे ग्रीन लिटरेचर फेस्टिवल के मंच पर मैंने भारत के प्रतिष्ठित पर्यावरण इतिहासकारों में से एक प्रोफेसर महेश रंगराजन को यह कहते हुए सुना – अन्य जीवों को उनकी विविधता और विभिन्न पारिस्थितिकी में एकसाथ रहते देखना ‘मनुष्य को सभी तरह की भिन्नता या परायेपन के प्रति संवेदनशील बनाता है’।

वे क्या तरीके हैं जिनमें जैव-विविधता एक राजनीति विज्ञान शिक्षिका बन जाती है? कई लोग अन्य प्रजातियों से अनेक परिवर्तनकारी राजनीतिक विचार ग्रहण कर रहे हैं। एलेक्सिस पॉलीन गम्स को व्हेल,

डॉल्फिन और सील से प्रतिरोध खड़ा करने और पूंजीवाद को मिटाने के तरीकों की गहन सीख मिली - अपनी बेहद शानदार किताब *अनड्राउण्ड* (Undrowned) से - समुद्री स्तनधारियों से अश्वेत नारीवादी सबक। ज्याँ पॉल गैगनन ने अपने तीन भागों में लिखे निबन्ध में गैर-इन्सानी लोकतंत्र पर प्रकाश डाला है, और 'अन्तरप्रजाति-चिन्तन' का उपयोग कर मधुमक्खियों, बोनोबोस, दीमकों और सूक्ष्मजीवों से बहुतेरे अपनाने लायक लोकतांत्रिक सबक लिए हैं जो मानव समाज पर लागू हो सकते हैं। साथ ही, इस बारे में प्रेरक विचार रखे हैं कि एक बहु-प्रजाति (बहुरंगी) लोकतंत्र कैसा हो सकता है। *इवोल्युशन्स रेनबो* (Evolution's Rainbow) पुस्तक में जोअन रफगार्डन हमें बताती हैं कि कैसे कीटों से लेकर मछलियों तक अन्य जीव हमें विविधतापूर्ण समाज, खासकर लैंगिक विविधतापूर्ण समाज में रहना सिखा सकते हैं। प्रकृति अत्यन्त क्वीर (queer) है - यह नर-मादा या स्त्री-पुरुष के खानों में नहीं बँटी है, यह विविधरंगी, विविध स्वभावी है। खालिस बाइनरी (पूर्णत: नर या मादा में सिमटी) प्रकृति मिलना मुश्किल है।

लेकिन एक अधिक सरल स्तर पर – बच्चे में प्रकृति का नियमित अवलोकन करने से कैसे और किस तरह की सूक्ष्म राजनीतिक समझ पनपेगी?

भिन्नता और सह-अस्तित्व

खुद के अनुभव से और बहुत-से शोध पढ़कर मुझे समझ में आया कि प्रकृति के अन्य हिस्सों के साथ सघन जुड़ाव से जो सरलतम और अत्यन्त महत्वपूर्ण राजनैतिक मूल्य से हमारा वास्ता पड़ता है, वो है 'विविधता'। बच्चे देखते हैं और परोक्ष रूप से सीख जाते हैं कि अत्यन्त गैर-बाइनरी बहु-प्रजाति (बहु-जीवी) दुनिया में कभी भी केवल एक स्वर, एक कथा, एक कहानी नहीं होती है। शिक्षक को किसी को भी यह सत्य बताने या सिखाने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। 'भिन्नता फिर भी सह-अस्तित्वता' वह लेंस है जिसके ज़रिए यह बात हमें समझ आने लगती है। अन्य प्राणी हमसे अवचेतन रूप से बात करते हैं। वे हमें स्पष्ट रूप से बताते हैं - धर्मशास्त्री कैथरीन केलर के शब्दों में - कि "भिन्नता भी एक तरह का सम्बन्ध है; हमारा अस्तित्व सिर्फ हमारी इस भिन्नता के परस्पर सम्बन्धों की वजह से है"।

जैव-विविधता का अवलोकन हमें उपभोक्ता/प्राप्तकर्ता की उस सोच से बाहर निकाल सकता है जिसमें पूंजीवादी संस्कृति ने अधिकांश मनुष्यों को जकड़ रखा है। प्रकृति के प्रत्यक्ष अवलोकन - जो अपने आप में राजनीतिक प्रतिधारा (मौजूदा मान्यताओं, प्रथाओं का विरोध करने वाले) है - हमें गहन अर्थों और

उद्देश्यों के सक्रिय खोजकर्ता बनाते हैं। तेवा के वरिष्ठ शिक्षक ग्रेगरी कैइती अपनी पुस्तक *लुक टू दी माउंटेन* में लिखते हैं, "यह अवलोकन करना कि प्राकृतिक दुनिया में वस्तुएँ कैसी होती हैं, यह मूल निवासियों की स्थानीय संस्कृतियों की कुछ सबसे प्राचीन और आध्यात्मिक शिक्षाओं का आधार है। प्रकृति प्रथम शिक्षक है और बहुत-सी प्रक्रियाओं के मॉडल उदाहरण भी मुहैय्या करवाती है। 'प्रकृति' को निहारने का तरीका सीखने से हमारी अन्य चीज़ों को समझने की क्षमता विकसित होती है।

गौर से देखें तो ज़रा

जब मैंने अपनी टीम के साथियों और साहसी युवा प्रकृति-शिक्षकों निकिता और शर्लट के साथ इस बारे में चर्चा की तो उन्होंने बताया कि कैसे उन्होंने और उनके दोस्तों ने सहजता से सड़कों के किनारे, झाड़ियों में, घास आदि को रोज़ाना ध्यान से देखने की आदत विकसित कर ली थी, खासकर 'वह सब देखने-ढूँढने की जो आसानी-से नहीं दिखता'। उनका मानना था कि यह विवेचनात्मक सोच की शुरुआत थी, जो उनके जीवन के अन्य क्षेत्रों और लोगों के साथ बातचीत में भी झलकने लगी थी। अदृश्य या अदृश्य किए गए (हाशियाकृत) को खोजने का सतत प्रयास। पॉण्डीचेरी के मेरे एक मित्र और साथी प्रकृति-शिक्षक सुरेंद्र बूबालन ने समता का एक और पहलू साझा किया जो उनके सामने तब प्रकट हुआ जब वे अपनी प्राथमिक कक्षा के बच्चों को पक्षी निहारने और उनके अवलोकन के लिए ले गए थे। अब वे बच्चों को पढ़ाकू या अल्प-पढ़ाकू, मेधावी या बुद्धू की नज़र से नहीं देखते - जैसा देखने के लिए कभी-कभी पारम्परिक या सीमित कक्षा उन्हें मजबूर करती है।

एक प्रकृति शिक्षक के रूप में व्यक्ति जिन राजनीतिक-शैक्षिक प्रक्रियाओं को अपनाता है, वह भी पारम्परिक कक्षा निर्देशों से काफी भिन्न होती हैं - जहाँ सारा ध्यान और सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में होती है - जिसे मैंने 'नियंत्रण का शिक्षाशास्त्र' कहना शुरू कर दिया है। किसी दलदली भूमि या पार्क में यदि कोई मेंढक या बगुला कुछ और दिखाने/सिखाने की तरफ ले जाता है, और (बच्चे या) सीखने वाले का रुझान मेरे तय प्लान की बजाय उस कुछ और सीखने/देखने की तरफ होता है तो मैं हमेशा इसके लिए जगह बनाना सीखता हूँ। इस तथ्य से अवगत रहते हुए कि उस परिवेश में मैं हमेशा एक शिक्षक भी हूँ और अन्य सभी की तरह शिक्षार्थी भी हूँ - जहाँ प्रकृति शिक्षक की भूमिका निभाने लगती है।

जब सीखना वास्तविक दुनिया से है तो शिक्षक के पास अपना नियंत्रण छोड़ने और एक 'सहकारी और सहभागी शिक्षाशास्त्र' विकसित करने

के अलावा कोई और चारा नहीं होता है - जिसमें सत्ता, ज्ञान और फोकस बहुत खूबसूरती से, कभी-कभी बराबरी से, विविध-लोगों, और विविध प्रजातियों में वितरित होता है। ये बहु-जीवी मूल्य कई आदिवासी समुदायों, जैसे इदु मिश्मी, संथाल, जेनु कुरुबा और कट्टुनायकन, में पहले से ही मौजूद हैं और प्रचलित हैं।

चुनौती देते सवाल

पल्लुयिर ट्रस्ट और पुडियाडोर संगठन के सहयोग से हम एक यूथ क्लाइमेट इंटर्नशिप चलाते हैं जो बदलती जलवायु के चलते असुरक्षित तीन क्षेत्रों - उरुर-ओल्कोट कुप्पम, रामापुरम, और कक्कण कॉलोनी – में चलने वाला एक कार्यक्रम है (तमिल में पल्लुयिर का अर्थ है जैव विविधता/बहुप्रजाति/सभी तरह का जीवन, और पुडियाडोर एक संगठन है जो शिक्षा के माध्यम से समूचे चेन्नई में हाशियाकृत समुदायों को सशक्त बनाने के लिए काम करता है)। इस कार्यक्रम के ज़रिए हम चेन्नई की पारिस्थितिकी और सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य को गहराई से देखने और समझने के लिए 10 क्षेत्रीय दौरे करते हैं। इसमें हम कानून और इसकी एडवोकेसी के तरीके सीखते हैं, हम अपने आसपास रहने वाली अन्य प्रजातियों और आवासों का अध्ययन करते हैं, और युवा अपने इलाके के लोगों को नियोजित सैर (अवलोकन) और विभिन्न अन्य गतिविधियों में शामिल करते हैं। पिछले दिसम्बर के रविवार की ठण्डी सुबह को उरुर कुप्पम में हमने 'प्रश्न करने' पर आधे दिन सघन बातचीत और चर्चाएँ कीं। सबसे पहले सुबह हमने 'जिज्ञासा मानचित्र' बनाया, जो विस्मय और जिज्ञासा की हमारी मांसपेशियों को सक्रिय रूप से मज़बूत करने का एक अभ्यास है।

सप्ताह भर से सिक्के जितने बड़े जेलीफिश जैसे जीव 'ब्लू बटन' जो समुद्र की सतह पर तैरते रहते हैं, शहर के समुद्रतट पर जमा हो रहे थे। अमूमन यह घटना साल में दो या तीन बार होती है, कभी-कभी तेज़ ज़मीनी हवाओं या भूकम्पीय घटनाओं की वजह से, और कभी कुछ अज्ञात कारणों से। हमने हालिया ब्लू बटन किनारे लगने के कारणों पर विचार किया, फिर इसके बारे में प्रश्न पूछे – जिसमें कब, क्यों, क्या, कैसे, कौन, और इन शब्दों के दायरे से भी परे कुछ प्रश्न किए। हमने यह सुनिश्चित किया कि हम उन सवालों से परे सवाल पूछेंगे जिनके बारे में दिमाग आसानी-से सोच सकता है और जिन्हें सोचने में दिमाग को थोड़ी मेहनत करनी पड़े, जो सचेतन रूप से हमारी जानने की क्षमता को चुनौती दें। फिर अपना-अपना जिज्ञासा मानचित्र बनाने के लिए हम समुद्र तट की ओर गए। सर्दियों का सूरज समुद्र क्षितिज से थोड़ा ऊपर चढ़ चुका था और धूप

गुनगुनी लग रही थी। कुछ मछुआरी-नावें सुबह-सुबह केकड़ा-जाल डालकर वापस आ रही थीं। एक समुद्री कछुआ ऑलिव रिडले मृत अवस्था में बहकर किनारे पर आ गया था, सम्भवतः किसी जाल फेंकने वाले ट्रॉलर जहाज़ की टक्कर से उसके खोल के नीचे दाहिनी ओर चोट लगी थी। हम सोलह लोगों में से प्रत्येक ने तट पर एक प्राणी या दृश्य को चुना और उससे जुड़ी अपनी जिज्ञासा व्यक्त की। उन्हें उकेरा और रंगा, फिर ऐसे सवालों का एक नक्शा बनाया जो सचेतन रूप से हमारी जिज्ञासा को कम्फर्ट ज़ोन से बाहर निकाल रहे थे। सजीले (डेकोरेटर) कृमि, छोटे-पतले-लम्बे शंख, कौवे, सीपियाँ, भूतिया केकड़े (Ghost crabs), गूज़ बार्नेकल, सैंड स्टार फिश और एक समुद्री कछुए ने हमें अपने आश्चर्य करने और जानने का अभ्यास करने में मदद की। "समुद्र के अन्दर बार्नेकल सीपियाँ कैसे बनती हैं?" "कैसे कोई सीपी अपने खोल को अन्दर से नरम और बाहर से सख्त बना देती है?" "कछुआ पानी के अन्दर कितनी दूर तक देख सकता है?" "छोटे-पतले-लम्बे शंख को पेंच जैसा आकार कैसे मिलता है?" "इन खाली खोलों (सीपियों-शंखों) के

फोटो: यूवान एविस

चेन्नई शहर के समुद्रतट के किनारे पर जैली फिश जैसे जीव - ब्लू बटन।

अन्दर के प्राणियों का क्या हुआ?" "क्या कछुए सपने देख सकते हैं?"

जिज्ञासा ज़िन्दा रखेगी

रोज़ाना के जीवन में जानना, सवाल करना एक परिवर्तनकारी राजनीतिक कार्य है। वे पृथ्वी पर पूंजीवादी अस्तित्व की संरचनात्मक असमानताओं और पैटर्न को कायम रखने वाली सदियों पुरानी, अक्सर कालविरुद्ध, सामाजिक संरचनाओं और मिथकों को बदलने में मदद करते हैं। जिज्ञासा राजनीतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक सतत पुनर्कल्पना को जीवित रखेगी - जो शायद एक सक्षम प्रजाति की पहचान है।

यूवान एविस: लेखक, प्रकृतिवादी, शिक्षक और एक्टिविस्ट। वर्तमान में, अबेकस मॉण्टेसरी स्कूल में 'फार्म, पर्यावरण और समाज' कार्यक्रम का समन्वय करते हैं। उन्होंने दो किताबें और कई लेख लिखे हैं। शायद सैंक्चुअरी के अब तक के सबसे कम उम्र के ग्रीन टीचर पुरस्कार प्राप्तकर्ता, युवान सबसे बेहतरीन, सबसे करिश्माई प्रकृति के शिक्षाविदों में से एक हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: प्रतिका गुप्ता: विज्ञान और गणित विषय उन्हें बेहद पसन्द हैं। वे *एकलव्य* द्वारा संचालित विज्ञान पत्रिका *स्रोत* की सम्पादक हैं और अपनी सम्पादकीय कैंची का बखूबी इस्तेमाल करती हैं। उन्हें भाता है, गीत सुनना और साथ गुनगुनाना। और उनके हिसाब से दोस्त हों तो बच्चों जैसे!

यह लेख *विकल्प संगम*, जनवरी 30, 2023 से साभार।

सैंड स्टार फिश

सरल आदमी की कठिन बात

हरिशंकर परसाई

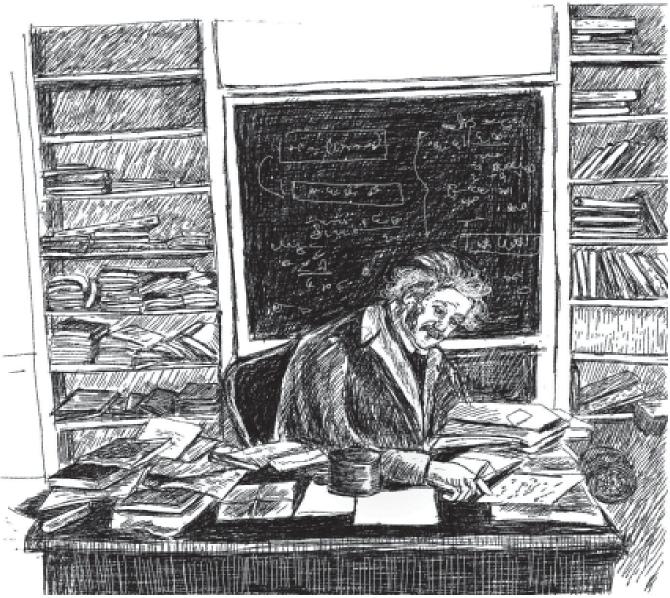

उस सरल आदमी का नाम अल्बर्ट आइंस्टाइन था। वह बच्चों जैसा भोला और बृहस्पति जैसा ज्ञानी था। बीसवीं शताब्दी के इस महान वैज्ञानिक, गणितज्ञ और मानवतावादी ने जिन सिद्धान्तों को विकसित किया, उनमें से एक 'सापेक्षता का सिद्धान्त' है। यह इतना गहन है कि किसी समय कहा जाता था कि दुनिया के केवल तीन व्यक्ति इसे समझते हैं।

यह सिद्धान्त जिसे बड़े-बड़े विज्ञानशास्त्री मुश्किल से समझते हैं, उसे सामान्य जन कैसे समझेंगे?

सिद्धान्त चाहे कितना ही कठिन हो, वह इन्सान बड़ा सरल था। आइए, उसके जीवन को समझने का प्रयत्न करते हैं।

आइंस्टाइन यहूदी थे। उस दौर में, कई ईसाई यहूदियों के प्रति अच्छा भाव नहीं रखते थे, क्योंकि ईसा को सूली पर चढ़ाने वाले लोग यहूदी थे। इसलिए इस समुदाय के भले लोगों

को भी कई ईसाइयों की घृणा का शिकार होना पड़ता था। हिटलर के ज़माने में नाज़ियों ने यहूदियों पर जो अत्याचार किए, वे कँपा देने वाले हैं। लाखों यहूदी, जिनमें बच्चे और बड़े, सभी शामिल थे, बड़ी निर्ममता से मार डाले गए। उन्हें अवर्णनीय यातनाएँ दी गईं।

आइंस्टाइन एक ईसाई स्कूल में पढ़ते थे। बचपन में ही उन्हें आभास हो गया था कि वे किसी अपराध के भागीदार माने जाते हैं। एक दिन आइंस्टाइन के शिक्षक कक्षा में एक कील लाए और उसे दिखाकर उन्होंने कहा कि इस कील से ही ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया था। कक्षा में बैठे सभी विद्यार्थियों की आँखें एकाएक आइंस्टाइन की ओर घूम गईं। वे बेचारे घबरा गए। उन्हें कुछ सूझा नहीं कि उन दर्जनों जोड़ी आँखों से कैसे बचा जाए। दुविधा और शर्म के कारण वे बिना एक शब्द बोले कक्षा से सीधा बाहर निकल गए, खुली हवा में चैन की साँस लेने के लिए।

विद्रोह

फिर तो आइंस्टाइन ने अपना सारा समय पुस्तकों में लगाने का निश्चय किया। सैकड़ों साल पुराने वैज्ञानिकों, मनीषियों, कवियों से उनने सम्पर्क स्थापित कर लिया – उनकी पुस्तकें पढ़-पढ़ कर। उनके लिए उन पुस्तकों में भी संगीत जैसी सात्विकता और विविधता थी। उनके ज़रिए अनगिनत रहस्य आइंस्टाइन के सामने खुलते जाते।

पर इसी समय उनके पिता पर गाज-सी गिरी। उनका व्यापार चौपट हो गया और सारा कुटुम्ब म्यूनिक छोड़कर मिलान चला गया। म्यूनिक में रह गए तो बस आइंस्टाइन – सोलह वर्ष का एक अकेला अनुभवहीन युवा।

पिता तो चाहते थे कि बेटा उन्हें व्यापार में मदद करता या इंजीनियर बन जाता। आइंस्टाइन का मन इस विचार से ही विद्रोह कर उठता। वह न तो व्यापार करना चाहते थे और न इंजीनियर बनना। पर दूसरों को समझाया कैसे जाए? अपनी इच्छा व्यक्त कैसे की जाए? वे आगे गणित पढ़ना चाहते थे। साधनों के अभाव में उन्हें अपने उद्‌देश्य की पूर्ति असम्भव-सी लगती थी। मगर जैसे-तैसे पिता को मना लिया गया और पूरी तैयारी से वे ज़्यूरिक पॉलीटेकनिक अकादमी में भर्ती होने के लिए प्रवेश-परीक्षा में बैठ गए। बैठ तो गए, पर वे असफल रहे। मगर वे इससे हारे नहीं। एकाग्र होकर फिर पढ़ाई में जुट गए और अगली परीक्षा में सफलता प्राप्त करके उनने अकादमी में प्रवेश पा लिया।

सभी तो हैं ज़रूरी

अकादमी से पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद अब आइंस्टाइन अपने से ही

पूछते, "तेरे जीवन का लक्ष्य आखिर है क्या?" और तब बहुत-सी बातें, बहुत-बहुत-सी चीज़ें उनके सामने एकसाथ आ खड़ी होतीं – अपना घर, माता-पिता, भाई-बहन, अपना गाँव, अपना समाज, अपना देश। और अपनी शिक्षा, अपनी बुद्धि और अपनी लगन के माध्यम से लोक-कल्याण – ये सभी तो उनके जीवन के अविभाज्य अंग हैं। इनमें से चुनाव कैसे करें वे? सभी तो उनके लिए परमावश्यक हैं, सभी के प्रति तो उनका उत्तरदायित्व है।

तब आइंस्टाइन विकल होकर खुद से कहते कि अच्छा-अच्छा सब रहें! सबको साथ लेकर वे चलेंगे, सबको सँभालेंगे, सबको!

फिर वे खुद से ही पूछ बैठते, "क्या करूँ?"

उन्हें लगता कि आसपास के सब लोग ठीक काम कर रहे हैं। केवल वे ही अव्यवस्थित हैं, केवल वे ही अकर्मण्य हैं। वे लोग दुकान जाते हैं, नौकरी करते हैं, स्कूल में पढ़ते-पढ़ाते हैं, पूजा-पाठ करते हैं... कुछ-न-कुछ सब करते हैं। वे सब कर्मठ हैं।

तब आइंस्टाइन को खयाल आया कि क्यों न वे अपनी पढ़ाई के सर्टिफिकेट का उपयोग करें। वे पढ़ा तो सकते ही हैं। पर नौकरी मिलना इतना आसान भी नहीं था। यहाँ-वहाँ भटके, पर उन्हें नौकरी पर लेने को कोई तैयार नहीं था, क्योंकि वे यहूदी थे।

थककर बैठते तो फिर उन्हें अपनी अकर्मण्यता का ध्यान आता, और वे दोबारा नौकरी की तलाश में व्यस्त हो जाते।

काम का आदमी

आखिरकार बर्न में उन्हें साधारण-सी क्लर्की मिली। वे खुद को समझाते – हाँ, हाँ! तुम भी काम के आदमी हो, कर्तव्य पूरा कर रहे हो।

क्लर्की तो वे करते ही, साथ ही दिक् (स्पेस) और काल (टाइम) के विषय में गहन अध्ययन भी जारी रखते। खाली समय में पेंसिल-कागज़ लेकर तरह-तरह के फॉर्मूले लिखते और अपनी एक सहपाठी को वह सब दिखाते।

दिन-रात एक करके वे पढ़ते और लिखते रहते थे। जितना भी उनसे हो सकता था, जी तोड़कर परिश्रम करते। और अब यह बात, यह आदत उनके हर काम में शुमार हो गई थी। दुनिया के साथ या समाज के साथ आइंस्टाइन ने जो कुछ भी किया, हृदय और लगन से किया। तभी तो वे अपने अनुसन्धान में व्यस्त रहे और विज्ञान की साधना करते रहे।

विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए वे लगातार हाथ-पैर पटकते रहे। उनकी साधना की पहले तो कहीं कोई इज़्ज़त नहीं हुई। उन्हें कोई पुरस्कार न मिला। विज्ञान के किसी भी महारथी ने उनकी पीठ न ठोंकी। कहीं उनका फोटो न छपा। उनकी

मेहनत का मूल्य न मिला। जो दस-पाँच आदमी उन्हें जानते थे, उनकी राय थी कि ये साधारण कोटि के प्रतिभाशाली, तरुण वैज्ञानिक हैं और अपने विषय को अच्छी तरह जानते हैं।

जब वे रात को थककर, चकनाचूर होकर लेट जाते तो सोचते कि अब आखिर वे आगे क्या करें। वे कोई प्रसिद्ध विद्वान नहीं, धनी नहीं, यशस्वी वैज्ञानिक नहीं! उन्नति उनने की नहीं, किसी क्षेत्र में भी नहीं। न उनने भोग-विलास किया, न उनने कभी गौरव पाया, न उनकी कहीं कोई गिनती है। उनने क्या-क्या सोचा था! कुछ नहीं हुआ!

ठीक ही है, अन्तिम कोशिश वे और करेंगे!

विश्व की स्वीकृति

इसी सिलसिले में धड़कते हृदय से उनने एक लम्बा-सा लेख लिखा और उसे उस समय के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जर्नल *एनालेन डर फिज़िक* में भेज दिया। साथ में भेजे पत्र में उनने उस जर्नल के सम्पादक से विनती की कि यदि सम्भव हो तो वह लेख प्रकाशित कर दिया जाए।

लौटती डाक से खबर आई कि उनका लेख बहुत अच्छा है और

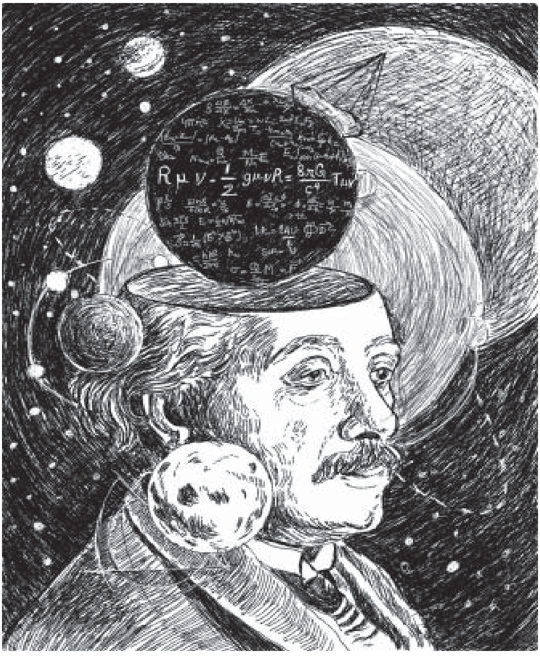

आइंस्टाइन का चमत्कारी वर्ष

दरअसल, 1905 में, जिसे 'आइंस्टाइन का चमत्कारी वर्ष' भी कहा जाता है, *एनालेन डर फिज़िक* में आइंस्टाइन के चार लेख प्रकाशित हुए थे। माना जाता है कि इन चार लेखों ने आधुनिक भौतिकी की नींव रखने में बेहद अहम योगदान दिया और साथ ही, ब्रह्माण्ड, प्रकाश, पदार्थ, दिक् और काल को लेकर हमारी समझ में क्रान्ति ला दी।

1. प्रकाश-विद्युत प्रभाव से सम्बन्धित अपने पहले लेख में, आइंस्टाइन ने प्रस्तावित किया कि प्रकाश 'प्रकाश क्वांटा' नामक कणों (जिन्हें बाद में 'फोटॉन' कहा जाने लगा) से बना होता है। इस प्रस्ताव ने प्रकाश की दोहरी प्रकृति (कणों और तरंगों, दोनों के रूप में) की अवधारणा और क्वांटम मैकेनिक्स के विकास में ज़बरदस्त योगदान दिया।
2. उनके दूसरे लेख ने ब्राउनी गति की सैद्धान्तिक व्याख्या के ज़रिए परमाणुओं की मौजूदगी के साक्ष्य मुहैया करवाए। इसने परमाणुवाद को और पुख्ता किया।
3. उनका तीसरा लेख सम्भवतः सबसे अधिक क्रान्तिकारी रहा। इस लेख में उन्होंने विशिष्ट सापेक्षता के सिद्धान्त को प्रस्तुत किया जिसके तहत प्रकाश की निरन्तर गति को छोड़कर सबकुछ (जैसे समय, दूरी, द्रव्यमान) सापेक्ष है।
4. चौथा लेख पिछले लेख का ही दूसरा भाग था, जो विशिष्ट सापेक्षता के नतीजों पर केन्द्रित था। इसी लेख में प्रसिद्ध समीकरण $E = mc^2$ विकसित किया गया था।

- सम्पादकीय टिप्पणी

जर्नल में छपेगा।

उनका लेख प्रकाशित हो गया! उनकी वह कृति प्राणों को छूकर, हृदय से चिपटकर किसी तरह इस बाह्य जगत में आ गई। इससे पहले बस दिल में थी, उनकी थी, पर अब तो सबके बीच पहुँच गई थी। उनने उत्सर्ग किया था।

और इसके साथ ही आइंस्टाइन अब विश्व के हो गए। विज्ञान के हर पारखी, हर पण्डित और विद्यार्थी की ज़ुबान पर उनका नाम पहुँचकर सब का बन गया था। दुनिया के कोने-कोने में उनकी ख्याति फैल गई, उनका महत्व स्वीकार कर लिया गया।

मामूली-सा क्लर्क अब अचानक महान वैज्ञानिक बन गया, पल भर में, मानो एक रात में ही यह सब उलट-फेर हो गया था!

किस खिड़की से देखें दुनिया?

स्पिनोज़ा के सर्वेश्वरवाद सम्बन्धी विचारों के वे प्रबल समर्थक थे। मगर

न्यूटन के पूर्ण स्थिर अवस्था के विचार का कतई नहीं। न्यूटन के अनुसार एक पूर्ण रूप से स्थिर 'विशिष्ट' सन्दर्भ विन्यास (फ्रेम ऑफ रेफरेंस) हुआ करता है जिसके विरुद्ध गति को मापा जा सकता है। आइंस्टाइन ने इस कल्पना का खण्डन किया और कहा कि वास्तव में प्रत्येक वस्तु चलायमान है, प्रत्येक वस्तु में गति है। यानी कि पूर्ण स्थिर अवस्था में कोई भी वस्तु नहीं है और इसलिए कोई 'विशिष्ट' सन्दर्भ विन्यास भी नहीं है। पर वस्तुओं की गतियों में आपस में एक सम्बद्धता-सी है, उनकी तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन किया जा सकता है। हाँ, केवल प्रकाश की गति (वैक्यूम में) सभी अवलोकनकर्ताओं के लिए निरन्तर है और उनके सन्दर्भ विन्यास से स्वतंत्र है। प्रकाश की गति लगभग 1 लाख 86 हज़ार मील प्रति सेकंड है। यही सबसे अधिक गति है, जो हम जानते हैं। इसी गति को आधार मानकर अन्य वस्तुओं की गति की तुलना की जा सकती है।

सापेक्षता के सिद्धान्त में गति के अतिरिक्त दिशा का ध्यान भी रखा जाता है। यदि एक पत्थर किसी ऊँची जगह से धरती पर गिराया जाए, तो हमें वह पत्थर सीधी रेखा में गिरता दिखाई पड़ेगा। इसी पत्थर को गिरते हुए यदि कोई ऐसा व्यक्ति देखे जो पृथ्वी के अलावा किसी अन्य स्थान या ग्रह पर हो, तो उसे पत्थर के गिरने की दिशा गोलाकार दिखाई पड़ेगी।

गति और दिशा के साथ-ही-साथ वस्तु का आकार भी नहीं भुलाया जा सकता। यदि किसी वस्तु की गति प्रकाश की गति के बेहद नज़दीक हो तो उसके अवलोकनकर्ता को उस वस्तु का आकार छोटा नज़र आने लगेगा। यानी मान लीजिए कि एक ऐसी रेलगाड़ी है जो प्रकाश की गति

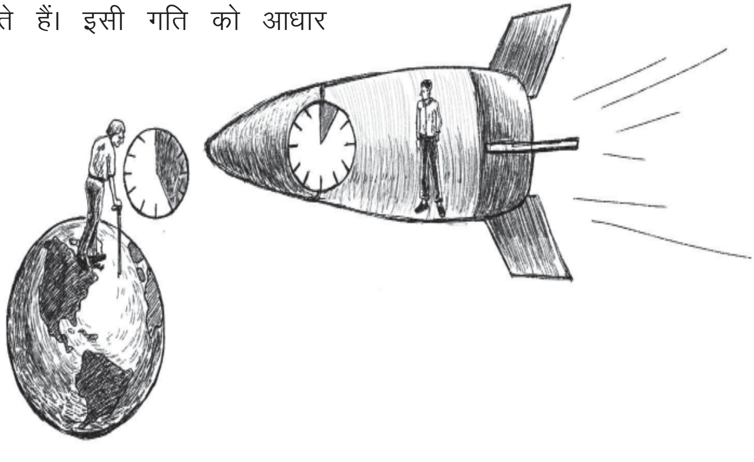

के बेहद नज़दीक की गति से भागती है, तो बाहर खड़े किसी व्यक्ति को उस रेलगाड़ी की लम्बाई छोटी प्रतीत होगी। रेलगाड़ी की आम गति में आकार की यह आभासी सिकुड़न इतनी सूक्ष्म होती है कि उसे देखा नहीं जा सकता।

गति के बढ़ने के साथ-साथ आभासी आकार उसी अनुपात में छोटा होता जाता है। हम एक छड़ी नापें और उसकी लम्बाई एक गज निकले। यही छड़ी यदि प्रकाश की गति से भागे, अर्थात् छड़ी एक सेकंड में एक लाख 86 हज़ार मील की गति प्राप्त कर ले, और इस स्थिति में छड़ी की लम्बाई नापी जाए तो वह केवल 0 (शून्य) प्रतीत होगी। तेज़ी-से भागती उस छड़ी की कोई लम्बाई-चौड़ाई नज़र नहीं आएगी।

इसी तरह, स्थान और समय के माप भी केवल तुलनात्मक/सापेक्ष रूप से किए जा सकते हैं। इनका स्वतंत्र अस्तित्व है ही नहीं। भूत, वर्तमान और भविष्य तो तीन पृथक बिन्दुओं के समान हैं। बम्बई, दिल्ली और कलकत्ता के समान अलग-अलग। जिस तरह बम्बई से दिल्ली जाया जा सकता है, उसी प्रकार आज से बीते कल पर पहुँचा जा सकता है। धरती से बहुत दूर खड़ा कोई व्यक्ति भूत, वर्तमान और भविष्य को अलग-अलग देख सकता है।

यदि प्रकाश की गति से भागना सम्भव हो सके तो मनुष्य अपनी जन्म-तिथि तक पीछे छोड़ सकता है और उससे भी आगे निकल सकता है। पर व्यावहारिक रूप में यह असम्भव है। इससे स्पष्ट है कि समय भी तुलनात्मक इकाई है।

प्रत्येक ग्रह की अपनी खुद की समय की इकाई है। हर ग्रह का समय नापने का अपना अलग पैमाना है।

हमने आज रात में एक तारा देखा। पर क्या वह तारा हम ज्यों-का-त्यों देख रहे हैं? नहीं। उस तारे से जो किरणें चली थीं, उन्हें हमारी आँखों तक पहुँचने में अरबों साल लगे होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि वह तारा जैसा अरबों वर्ष पूर्व था, वैसा आज हमने देखा। मान लीजिए, किसी अन्य ग्रह के निवासी हमारी पृथ्वी की घटनाओं को देख रहे हैं। तो, यह भी हो सकता है कि किसी दूर के निवासियों ने आज या कल हमारा कोई युद्ध देखा हो। और धरती पर यह युद्ध सैकड़ों वर्ष पूर्व हो चुका हो। धरती का आज या वर्तमान अन्य के लिए कल या भूत हो सकता है।

कवि का आनन्द

जिन आइंस्टाइन को एक समय यूरोप में नौकरी के लिए दर-दर ठोकरें खानी पड़ी थीं, जिन्हें यहूदी होने के कारण घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, उन्हीं आइंस्टाइन को ज़्यूरिक में प्रोफेसर का पद प्रदान किया गया। आइंस्टाइन को

पारम्परिक ढंग से विज्ञान पढ़ाने में अधिक रुचि न थी। उनका मत था कि पारम्परिक तौर पर प्रोफेसर तो सिर्फ तथ्य-संग्रह करते हैं, जैसे कुत्ते हड्डी जमा किया करते हैं। शायद ही कोई विरला शिक्षाशास्त्री होगा जिसके पास कवि जैसे संवेदनशील और भावुक मस्तिष्क और हृदय होंगे। आइंस्टाइन का मत था कि वैज्ञानिक या भौतिकशास्त्री को अपनी खोज में वैसा ही आनन्द आता है, जैसा कवि को कविता लिखने में। दोनों ही कवि हैं। उनके इस कथन का मज़ाक़ उड़ाने में विज्ञान के पण्डित कभी नहीं चूकते थे।

अपने इस कथन को ये वैज्ञानिक अपने दैनिक जीवन में भी सार्थक करते थे। रोज़मर्रा के जीवन की बातों में वे बहुत दिलचस्पी लिया करते थे। अपने बच्चे को बाबा-गाड़ी में बैठाकर घुमाने में उन्हें अत्यधिक सुख प्राप्त होता था, इतना सुख तो उन्हें किसी विश्वविद्यालय में भाषण देने में भी न आता था। रास्ते में पैदल आते-जाते वे सापेक्षवाद के गूढ़ और मनोरंजक सिद्धान्तों की कल्पना में डूबे रहते। न जाने कितने सिद्धान्तों के बारे में उन्होंने चलते-फिरते ही सोच-विचार किया होगा।

बर्लिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बनने के बाद भी आइंस्टाइन अपनी पिछली ज़िन्दगी न भूले थे। अच्छे दिनों में, प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करने के पश्चात् भी वे क्लर्की के उन दिनों को याद करते थे।

समझे कौन?

उन्होंने कहा था, “अगर सापेक्षवाद का सिद्धान्त सही साबित हो जाता है तो जर्मनी मुझे जर्मन कहेगा और फ्रांस मुझे विश्व-नागरिक घोषित कर देगा। अगर मेरा सिद्धान्त गलत साबित हो जाता है तो फ्रांस मुझे जर्मन और जर्मनी मुझे यहूदी घोषित कर देगा।”

आइंस्टाइन दुनिया वालों के स्वभाव से परिचित थे और मानवीय कमज़ोरी का वे ज्ञान रखते थे। सफलता प्राप्त होती है, तो समस्त विश्व प्रशंसक बन जाता है। सापेक्षवाद सही निकलते ही उनके यहाँ लोगों का ताँता लगा रहता - पत्रकार, प्रोफेसर, फोटोग्राफर उनके पीछे पड़े रहते। उनका राह चलना मुश्किल हो गया, कार्य करना कठिन हो चला। इतना समय न मिल पाता कि आगे कुछ और खोजबीन की जा सके। बायरन जैसी एक रात की प्रसिद्धि ने आइंस्टाइन के मन पर किसी प्रकार के अहं, विकार और मिथ्याभिमान को जमने नहीं दिया। पत्नी से आइंस्टाइन मज़ाक में कहते कि यह तड़क-भड़क, शोर-गुल, विज्ञापन बस चन्द दिनों का है। जनता शीघ्र उन्हें भूल जाएगी। लोग उनके बारे में बस बात करना जानते हैं, उन्हें समझता कोई नहीं।

कोई अभिनेता उन्हें अपना मैनेजर

बनाना चाहता, एशिया के जंगलों में जाने वाले उनके मार्गदर्शन की अपेक्षा करते। एक सिगार बनाने वाली कम्पनी ने एक नए किस्म का सिगार बनाया और उसका नाम 'रिलेटिविटी' रखा।

पर आइंस्टाइन गौतम बुद्ध की तरह किसी भी कोटि के सम्मान के प्रति निर्लिप्त-से रहे। सभा, पार्टियों में जाते तो पुराने गरम कपड़े पहनते। दिखावे से दूर भागते। नहाने और दाढ़ी बनाने का साबुन एक ही रखते, जिससे किसी तरह का व्यवधान उत्पन्न न हो।

एक बार बेल्जियम की साम्राज्ञी ने आइंस्टाइन को आमंत्रित किया था। उनके स्वागत के लिए स्टेशन पर दर्जनों कीमती कारें खड़ी प्रतीक्षा कर रही थीं। वे रेलगाड़ी से उतरे तो उनके एक हाथ में छोटा सूटकेस और दूसरे हाथ में वायलिन था। भद्रपुरुष आइंस्टाइन को खोजते रहे, पर उन्हें कहीं भी कोई रोबीला या महान दिखने वाला वैज्ञानिक नहीं दिखाई दिया। हारकर, निराश होकर वे सब लौट गए। और तब तक आइंस्टाइन पैदल चलकर साम्राज्ञी के महल पहुँच चुके थे। साम्राज्ञी एकदम से चौंक गईं। वैज्ञानिक ने कह दिया

कि उन्हें पैदल चलना अधिक रुचा। कीमती कारों की उन्हें परवाह कभी नहीं रही।

ज़िन्दगी में आइंस्टाइन सदा पैदल चलते रहे। तड़क-भड़क, शोरगुल उन्हें बिलकुल पसन्द न थे। धन इकट्ठा उन्होंने कभी नहीं किया और न करना चाहा। बड़े अजीब प्रस्ताव आते उनके पास। सम्पादक लाखों रुपए देना चाहते, किसी भी प्रकार के लेख के लिए। ऐसे मौकों पर वे क्रोध से उबल पड़ते।

अमन की यात्रा

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद आइंस्टाइन ने अनेक 'शत्रु देशों' की यात्रा की और भाषण दिए, ताकि विभिन्न देशों के बीच मैत्री पुनः स्थापित हो जाए। उन दिनों पेरिस या लंदन में जर्मन बोलना खतरे से खाली नहीं था, तो भी वे अपना भाषण जर्मन में देते और श्रोताओं की सहानुभूति अर्जित करने में पूरी तरह सफल होते।

एक समय एक रूसी के हाथों उनकी हत्या होते-होते बची। जर्मनी का एक वर्ग उन्हें फूटी आँखों न देखता था। उनका नाम ब्लैकलिस्ट में आ चुका था। यहूदी होने के कारण उनसे घृणा की जाती। इस परिस्थिति में वे चुपके से हॉलैंड चले गए। वहाँ भी उन्हें चैन न मिला।

आइंस्टाइन ने कई पूर्वी देशों की यात्रा भी की। ये अभूतपूर्व यात्री, दार्शनिक और वैज्ञानिक गणित के सूत्रों और वायलिन के साथ फिलिस्तीन, स्पेन और दक्षिण अमेरिका तक घूम आए।

युद्ध-शस्त्र

नवम्बर 1932 में आइंस्टाइन कुछेक वैज्ञानिकों से वार्तालाप कर रहे थे। उन्हें बताया गया कि हिटलर ने जर्मनी में एक भयानक तूफान पैदा कर दिया है और विश्व में भयानक उथल-पुथल और संघर्ष होने वाले हैं। और इसके चलते उन्हें जर्मनी छोड़कर अमेरिका आना पड़ा।

और इस वैज्ञानिक, महान दार्शनिक, शान्ति के पुजारी के जीवन में सन् 1939 में एक ज़बरदस्त मोड़ आया। इस घटना ने उनकी समस्त चेतना और जीवनधारा को आमूलचूल रूप से झकझोर दिया। उस समय वे अपने जीवन की शायद सबसे बड़ी, अक्षम्य भूल कर बैठे।

अपने सहयोगी वैज्ञानिक साथियों के कहने पर आइंस्टाइन ने तत्कालीन अमेरिकन राष्ट्रपति रूज़वेल्ट के सामने पेश किए जाने वाले एक पत्र पर अपना दस्तखत किया। पत्र में बताया गया था कि नाज़ी जर्मनी ने अणु का विभाजन सफलता पूर्वक कर लिया था और सम्भवतः वे अणु-बम विकसित करने में लगे थे। अणु-विभाजन का सैनिक-महत्व भी राष्ट्रपति को बतलाया गया और उन्हें अणु-विभाजन पर अनुसन्धान कार्य के लिए एक कार्यक्रम शुरू करने का

सुझाव दिया। और इस तरह इस पत्र ने 'मैनहैटन प्रोजेक्ट' के शुरू किए जाने को प्रभावित किया, जिसका लक्ष्य था, अणु-बम विकसित करना।

बाद के दौर में, आइंस्टाइन ने तत्कालीन अमेरिकन राष्ट्रपति ट्रूमैन से भी प्रार्थना की थी कि अणु-विभाजन से उत्पन्न होने वाली प्रचण्ड शक्ति का उपयोग युद्ध या विध्वंसक शस्त्र बनाने के लिए न किया जाए।

पर विज्ञान की पराजय हुई। राजनीति ने विज्ञान की आत्मा पर पैर रखकर ऐसा भयानक शस्त्र बनाया जो मानवता के लिए सदा-सदा के लिए अभिशाप बन गया।

हिरोशिमा और नागासाकी में जो विनाश-लीला देखने में आई, उसने आइंस्टाइन की आत्मा में सदैव के लिए गहरे घाव अंकित कर दिए थे। सन् 1945 का वर्ष उस वैज्ञानिक के लिए बहुत ही दुश्वार गुज़रा।

तब से आइंस्टाइन विश्व-सरकार के पक्षधर हो गए। सन् 1955 में उनकी मृत्यु हुई, लेकिन आखिरी दम तक उन्होंने एक सुनहला सपना देखा, जिसमें दुनियाभर के अरबों लोग एकसाथ रह सकेंगे, जात-पात, काले-गोरे, ऊँच-नीच की क्षुद्रतम सीमाओं का कुछ भी महत्व न रहेगा। मानवता चैन और सुख-शान्ति का अनुभव करेगी। एक सुनहरा ख्वाब!

हरिशंकर परसाई (1924-1995): हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध व्यंगकार थे। व्यंग रचनाओं के अलावा उपन्यास और लेख भी लिखे। उनका जन्म जमानी, होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) में हुआ था। वे हिन्दी के पहले रचनाकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाया और उसे हल्के-फुल्के मनोरंजन की परम्परागत परिधि से उबारकर समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। साहित्य अकादमी पुरस्कार, शिक्षा सम्मान (मध्य प्रदेश शासन), शरद जोशी सम्मान आदि से सम्मानित।

चित्र: हरमन: चित्रकार हैं। दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से फाइन आर्ट्स (चित्रकारी) में स्नातक और अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर। भटिंडा, पंजाब में रहते हैं।

यह विज्ञान गल्प मित्र-बन्धु-कार्यालय, जबलपुर द्वारा सन् 1964 में प्रकाशित हरिशंकर परसाई की किताब *वैज्ञानिक कहानियाँ* से लिया गया है। यह किताब तैलंगाना क्षेत्र की ग्यारहवीं कक्षा के लिए नॉनडिटेल्ड प्रथम भाषा की पाठ्यपुस्तक के रूप में आन्ध्र प्रदेश शिक्षा विभाग द्वारा दी गई स्वीकृति के तहत प्रकाशित की गई थी।

यह लेख मूल लेख का सम्पादित स्वरूप है जिसमें तथ्यात्मक त्रुटियों को ठीक करने के साथ ही पठनीयता बेहतर करने की भी कोशिश की गई है।

Nature-Society Series

GOA

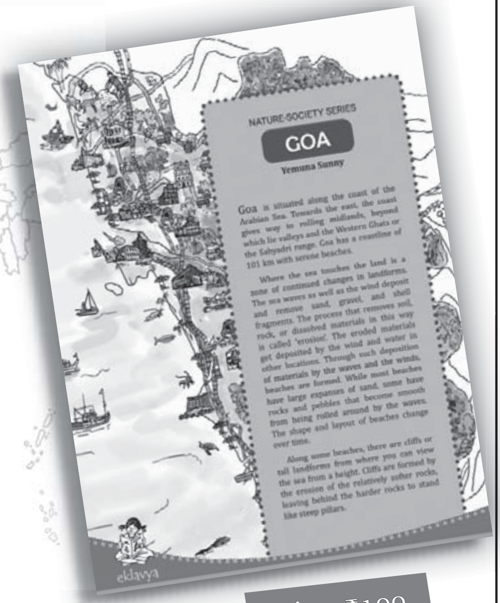

Price: ₹100

A collection of innovative maps by Yemuna Sunny, critical geographer and teacher, this series is an asset to geography classrooms, libraries, and teacher educational institutions, among others. Using beautiful, distinct icons, these maps clearly mark the physical spaces while conveying the type of human interactions with nature in each of them. The accompanying booklets provide information on the regions including their history, geographical features, environment, people, and intersections of each of these.

Practising and aspiring teachers, educators, learners of all ages, geographers, ecologists, and especially you, our dear reader, would enjoy learning about Goa's unique ecology through this edition. It's a promise.

एकलव्य

To place the order -

Phone: +91 755 297 7770-71-72; Email: pitara@eklavya.in

www.eklavya.in | www.eklavyapitara.in

शिक्षकों की सतत तैयारी का मंच मासिक गोष्ठी

कालू राम शर्मा

मास्साब सुबह उठकर चाय पी रहे थे कि याद आया, आज संगम केन्द्र पर मासिक बैठक में जाने के बारे में प्रधानाध्यापक को तो बताया ही नहीं। फिर उन्हें खयाल आया कि प्रधानाध्यापक शिक्षा विभाग में प्रशासनिक कार्यों में उलझे होने की वजह से स्कूल नहीं आ रहे हैं। वैसे प्रशासनिक कार्यों की वजह से महीने में दस-बारह दिन उनका शिक्षा विभाग कार्यालय के चक्कर लगाना आम बात थी। इसी वजह के चलते कभी-कभी तो हफ्ते भर तक स्कूल में प्रधानाध्यापक के दर्शन नहीं होते।

वैसे भी, प्रधानाध्यापक स्कूल में रहें तब भी उन्हें बच्चों की पढ़ाई से कोई खास लेना-देना नहीं होता। दरअसल प्रधानाध्यापक, जो कभी स्वयं भी एक शिक्षक थे, बच्चों और उनकी सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं से विमुख हो चुके थे। जब से वे प्रधानाध्यापक की कुर्सी पर बैठे, उसके बाद से उन्हें शिक्षा विभाग के प्रशासनिक कार्यों से बड़ा लगाव हो गया था। प्रदेश का शिक्षा विभाग एक ऐसा विभाग है जिसका बच्चों की शिक्षा व सीखने-सिखाने के मसलों से खास कोई लेना-देना नहीं होता। शिक्षा विभाग के अधिकारी से लेकर बाबू तक शिक्षा की योजनाओं के शैक्षणिक सिद्धान्तों वगैरह से पूरी तरह से अनभिज्ञ होते हैं। होशंगाबाद विज्ञान की बात करें तो इसके समस्त आदेश वगैरह सबकुछ शिक्षा विभाग से ही प्रसारित होते, मगर इसके शैक्षणिक - सामाजिक - योजनागत पहलुओं के बारे में शिक्षा विभाग के नुमाइन्दों को अक्सर ठीक-ठीक पता नहीं होता था।

मास्साब ने चाय का आखिरी घूँट

लिया और कप को रसोई में रखने के लिए जाते हुए विलाप कर रहे थे, "होविशिका की मासिक गोष्ठी में जाना हो या कोई और सीखने-सिखाने का काम, उसके लिए प्रधानाध्यापक बड़ी मुश्किल से ही राज़ी होते हैं।" मास्साब ने जब भी पढ़ाई वगैरह के मसलों पर प्रधानाध्यापक से बात करना चाही, तब-तब उनकी बात को नज़रअन्दाज़ ही किया गया। बल्कि कभी-कभी तो प्रधानाध्यापक पढ़ाई का मज़ाक बनाते और उनके द्वारा कोई-न-कोई अड़ंगा लगा दिया जाता। पिछले कुछ सालों में, चाहे वह कक्षा में विज्ञान शिक्षण के लिए दो पीरियड की व्यवस्था हो, बच्चों को लेकर परिभ्रमण पर जाने का मामला हो या फिर मासिक बैठक में जाना, प्रधानाध्यापक किसी-न-किसी प्रकार का रोड़ा अटका ही देते।

मास्साब फटाफट तैयार हुए और घर से निकलते हुए अपनी पत्नी से बोले, "आज मासिक गोष्ठी में जाना है। शाम को घर आने में देर हो जाएगी।"

मास्साब की पत्नी कपड़े का थैला थमाते हुए बिना कोई प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए बोलीं, "सुनो तो... किराने का सामान ज़रूर लेते आना। और हाँ, बच्ची की दवा भी खत्म होने वाली है... वो भी..."

मास्साब ने हाँ में हाँ मिलाई और थैला लटकाए चल दिए। घर की सीढ़ियाँ उतरते हुए उन्होंने देखा कि भागचन्द्र और इसरार गली के नुक्कड़ की ओर से उनकी ओर लपककर आ रहे हैं। मास्साब दोनों को देख आखिरी सीढ़ी पर ही रुक गए और पूछने लगे, "क्यों... क्या बात है?"

इसरार कुछ कहे, इसके पहले ही भागचन्द्र ने पूछा, "मास्साब, आज *बाल विज्ञान* में क्या करना है?"

मास्साब सोचते हुए बोले, "ओह हाँ, ऐसा करना कि एकबीजपत्री और दोबीजपत्री बीज ले जाना।"

आखिरी सीढ़ी उतरते हुए मास्साब ने पूछा, "एकबीजपत्री-दोबीजपत्री समझते हो कि नहीं?"

भागचन्द्र और इसरार, दोनों ही कुछ देर के लिए ठिठककर खड़े हो गए और सोचने लगे। फिर इसरार बोला, "मास्साब, गंवु, मक्की, जुवार... एकबीजपत्री।"

"और दोबीजपत्री?" मास्साब इस बार भागचन्द्र से पूछना चाह रहे थे।

भागचन्द्र ने जवाब दिया, "...चना, बटला, मूँगफली... दोबीजपत्री।"

मास्साब दोनों का जवाब सुनकर मन-ही-मन खुश हुए मगर उन्होंने उनके सामने कोई खुशी ज़ाहिर नहीं की। वे जल्दी में थे इसलिए जल्दबाज़ी में बोले, "ठीक, ठीक! बाद में बात करेंगे।"

मास्साब से बातचीत करके भागचन्द्र और इसरार वहाँ से एक-दूसरे के गले में हाथ डालकर चल दिए।

बच्चों और मास्साब के बीच अब दूरियाँ कम होती जा रही थीं। इसकी वजह यह थी कि कक्षा में बच्चों और मास्साब के बीच अब एकतरफा संवाद नहीं था। प्रयोगों और गतिविधियों के दौरान बच्चे उनसे कुछ-न-कुछ पूछते रहते थे। साथ ही, मास्साब को भी जब कुछ बताना होता तो वे बच्चों के स्तर पर आकर बातचीत करते। बच्चे अब मास्साब से डरते भी नहीं थे। इसकी वजह थी - मास्साब का व्यवहार। मास्साब बच्चों के साथ दोस्ताना अन्दाज़ में रहते थे। यही वजह थी कि बच्चे मास्साब के घर पर भी पहुँच जाते थे। कभी-कभी शाम को मास्साब के आँगन में कक्षा के जैसा माहौल दिख जाता था।

इजाज़त - कब और किसे?

मास्साब आज वक्त से पहले, सुबह की पाली में स्कूल पहुँच चुके थे। कमरे का ताला खोल, अलमारी में से रजिस्टर और किताबें निकालकर वे प्रधानाध्यापक के आने का इन्तज़ार कर रहे थे। हालाँकि स्कूल के एक और शिक्षक ने *बाल विज्ञान* का प्रशिक्षण प्राप्त करना प्रारम्भ कर दिया था मगर स्कूल की व्यवस्था बनी रहे इसलिए मासिक बैठक में एक ही शिक्षक का जाना तय किया गया था।

प्रधानाध्यापक स्कूल में आ चुके थे। उन्होंने मास्साब के सामने प्रशासनिक पुराण शुरू कर दिया जो थमने का नाम ही नहीं ले रहा था। मास्साब इस निरर्थक चर्चा के बीच कोई ऐसा रास्ता ढूँढ रहे थे जिससे मासिक बैठक में जाने की इजाज़त मिल जाए और वे वहाँ से चलते बनें। प्रधानाध्यापक की बातचीत में जैसे ही विराम लगा कि मास्साब निराले अन्दाज़ में बोले, "मासिक बैठक में जाना है, आज।"

प्रधानाध्यापक ज़ोर का ठहाका लगाकर बोले, "समझ में नहीं आता कि सरकार कब तक 'प्रयोग' करती रहेगी।"

प्रधानाध्यापक के इस रुख से मास्साब क्षुब्ध थे मगर उन्होंने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त करना उचित नहीं समझा। यह तो रोज़ की बात बन गई थी। मास्साब ने मासिक बैठक के महत्व के बारे में पहले भी कई दफा विस्तार से बताया था। प्रधानाध्यापक मासिक बैठक में जाने को लेकर

सीधे-सीधे मना तो नहीं करते, मगर जाने की सहर्ष स्वीकृति भी नहीं देते।

अबकी बार मास्साब ने कोई बहस नहीं की। इतना ही बोले, "मैं जा रहा हूँ।"

मास्साब को जाते हुए देख प्रधानाध्यापक अनमने ढंग से बोले, "...चलिए, कोई बात नहीं। आप कहते हैं तो जाइए।"

मास्साब कमरे से बाहर निकलने ही वाले थे कि प्रधानाध्यापक ने एक बार फिर से कुछ कहा, "देखिए, कुछ समझ में नहीं आता कि ये रोज़-रोज़ का जाना-आना क्यों? आखिर क्या गुल खिलाते हैं वहाँ?"

मास्साब दहलीज़ पर खड़े होकर बोले, "सर, मैं आपसे कई बार निवेदन कर चुका हूँ - चाहें तो आप भी चलकर देखें कि वहाँ क्या 'गुल' खिलते हैं। ये कार्यक्रम तो शिक्षा विभाग का है। आदेश आपकी फाइल में लगा हुआ है। फिर इतने सारे सरकारी काम में भी हम जाते हैं, तब तो नहीं रोका जाता।"

मास्साब को रोष आ रहा था, मगर वे अपने को नियंत्रित करने की कोशिश करते हुए आगे बोले, "पूरे साल की मासिक बैठकों के कार्यक्रम का आदेश भी संगम केन्द्र से आ चुका है। मैं तो बस आदेश का पालन कर रहा हूँ।"

प्रधानाध्यापक हँसते हुए बोले, "कुछ भी कहो, ये होशंगाबाद विज्ञान वालों के पास तर्क बड़े भारी होते हैं।"

मास्साब ने चुप रहना ही मुनासिब समझा। उन्होंने हाथ हिलाकर प्रधानाध्यापक का अभिवादन किया और मासिक बैठक के लिए चलते बने।

मासिक बैठक - एक शैक्षिक मंच

तीन वर्ष तक गर्मी की छुट्टियों में 21-21 दिनों के उन्मुखीकरण शिविर के अलावा शिक्षकों के सतत उन्मुखीकरण के रूप में मासिक बैठक के आयोजन का प्रावधान किया गया था। मासिक बैठक का मकसद शिक्षक-शिक्षिकाओं को शिक्षण के दौरान आने वाली समस्याओं के हल ढूँढना व अपने शिक्षण के अनुभवों को साझा करना होता था।

पास के ही कस्बे के उच्चतर माध्यमिक स्कूल को संगम केन्द्र बनाया गया था। आसपास के स्कूलों में संचालित होशंगाबाद विज्ञान के समस्त शिक्षक एक निर्धारित तिथि को एकत्रित होकर, पूरे महीने में *बाल विज्ञान* का शिक्षण करते हुए कैसे-कैसे अनुभव हुए, किस-किस प्रकार की दिक्कतें आईं, उनका हल किस प्रकार से खोजा या नहीं खोज पाए, इन सभी मसलों पर चर्चा करते। यानी ऐसी चर्चाओं का एक मंच थी - मासिक बैठक। वे इस मंच को अपनी भड़ास प्रकट करने का एक माध्यम भी समझते थे।

दरअसल, मासिक बैठक सभी

शिक्षकों के आपसी संवाद का भी मंच बन चुकी थी, जिसमें वे शिक्षक समुदाय से जुड़ी व्यक्तिगत और सार्वजनिक समस्याओं पर भी चर्चा करते थे। *बाल विज्ञान* के शिक्षण के लिए किट की समस्या और उसके निराकरण जैसे मसलों को लेकर कोई-न-कोई मार्गदर्शन मिल ही जाता था। मासिक बैठक के एजेंडे का एक हिस्सा होता था - शिक्षण में आने वाली समस्याओं पर चर्चा। जब कोई शिक्षक, समूह के समक्ष अपना अनुभव साझा करता तो अन्य शिक्षकों को भी कोई-न-कोई ऐसा सूत्र मिल जाता जो उन्हें अपनी कक्षा की किसी समस्या को हल करने में मदद करता।

चर्चाओं का विस्तार

संगम केन्द्र पर अब तक शिक्षक-शिक्षिकाएँ पहुँच चुके थे। उधर संगम केन्द्र प्रभारी स्वयं भी कागज़ी कामों में उलझे हुए थे। केन्द्र प्रभारी ने मासिक बैठक की योजना बनाई और बैठने का स्थान सुनिश्चित किया। संगम केन्द्र के प्राचार्य आज स्कूल में नहीं थे। बताया गया कि वे आज शिक्षा विभाग के कार्यालय में गए हुए हैं।

संगम केन्द्र के प्राचार्य इस कार्यक्रम के शैक्षिक पहलुओं से अच्छी तरह परिचित थे। वे जब भी मासिक बैठक के दिन स्कूल में होते तो कुछ समय बैठक में उपस्थित होकर शिक्षक साथियों से ज़रूर रूबरू होते। मासिक बैठकों में स्रोत दल के सदस्य तो मौजूद रहते ही थे। स्रोत दल में समय-समय पर विभिन्न प्रकार के विशेषज्ञ उपस्थित रहते थे। *एकलव्य* के साथी तो समस्त मासिक बैठकों में पहुँचते ही थे। साथ ही, कभी-कभार महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक भी इन बैठकों में उपस्थित हो जाते थे। इन बैठकों में देश के विश्वविद्यालयों और वैज्ञानिक संस्थानों से जुड़े स्रोत सदस्य हों या बड़े से बड़ा अधिकारी, सभी एकसाथ एक जाजम पर बैठते-उठते और खुलकर चर्चाएँ करते।

बैठक में प्राचार्य की संक्षिप्त उपस्थिति शिक्षक बिरादरी को प्रशासनिक रूप से समर्थन और संबल देने का काम करती। शिक्षकों को असल समर्थन तो स्रोत दल से मिलता था। स्रोत दल की उपस्थिति शिक्षक-शिक्षिकाओं का उत्साह बढ़ा देती। कभी-कभार शिक्षकों की शिक्षण से जुड़ी समस्याओं का भले ही हल नहीं निकलता, मगर फिर भी उन्हें लगता कि स्रोत दल एक ऐसी शक्ति है जो स्कूलों के साथ लगातार सम्पर्क बनाए रखते हुए, और साथ ही संगम केन्द्र स्तर के कामों को अंजाम देते हुए, इस कार्यक्रम को सजीव बनाए हुए है।

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के सम्पूर्ण कार्यक्षेत्र में मासिक बैठक का आयोजन एक शैक्षिक परम्परा का रूप ले चुका था।

स्रोत दल और शिक्षक मिलकर संगम केन्द्र पर दिनभर *बाल विज्ञान* के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करते।

सत्र की यह पाँचवीं बैठक थी। बैठक में कई सारे ऐसे मसलों पर चर्चा हो रही थी जो पिछले वर्षों में कई बार दोहराए जा चुके हैं, मसलन किट की व्यवस्था, किट के लिए लोकल फंड का इस्तेमाल, प्रशिक्षणों के टीए-डीए का भुगतान, *बाल विज्ञान* के लिए दो पीरियड की व्यवस्था, प्रायोगिक परीक्षा, स्कूल में पर्याप्त शिक्षकों की व्यवस्था, शिक्षकों का स्थानान्तरण, प्रधानाध्यापक और अन्य शिक्षकों का कार्यक्रम के प्रति रुख, एक-दूसरे की शालाओं में अनुवर्तन, टोलियों में काम का महत्व आदि। ये ऐसे मसले थे जो हर बैठक में चर्चा में बने रहते थे।

शैक्षिक साझेदारी

दरअसल, संगम केन्द्र की संकल्पना कोठारी आयोग (1964) ने सुझाई थी जो सही मायनों में 1978 में होशंगाबाद ज़िले में, और बाद के सालों में, होविशिका के विस्तार के साथ-साथ, प्रदेश के 14 अन्य ज़िलों में मैदानी स्तर पर क्रियान्वित हो सकी थी। स्कूली शिक्षा का कोई भी कार्यक्रम जो शिक्षा में गुणात्मक सुधार का हो, उसमें उत्पन्न होने वाली शिक्षकों और बच्चों की समस्याओं पर निरन्तर विमर्श और उनके हल की गुंजाइश की दरकार करता है। होविशिका में जो अनूठी बातें थीं, उसके केन्द्र में बच्चे और शिक्षक थे। यही वजह थी कि मासिक बैठक में भी वे मसले ही प्रमुख होते थे जो शिक्षकों और बच्चों की विज्ञान

शिक्षा की सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं से जुड़े होते थे।

शिक्षक-शिक्षिकाओं का हौसला बनाए रखने और बढ़ाने में होविशिका की भूमिका अहम रही है। जब हम कहते हैं कि बच्चों में सवाल पूछने की आदत का विकास हो, तो भला ऐसे कैसे हो सकता है कि शिक्षकों में यह गुण विकसित न हो? यही वजह है कि इस कार्यक्रम में शिक्षकों को स्वतंत्र रूप से अपने विचारों को व्यक्त करने की आज़ादी थी। शिक्षकों में सवाल करने का, और अपने विचारों को व्यक्त करने का यह गुण फल-फूल रहा था। कुल-मिलाकर शिक्षक-शिक्षिकाएँ बेबाक और दबंगता से अपनी बात को रखने का हौसला रखते थे।

मासिक बैठकों में, कई मामलों में स्रोत दल की ओर से समर्थन मिल जाता, तो कई मामलों में सीधे ही सम्बन्धित संगम केन्द्र से मदद मिल जाती। किट जैसे मामलों में स्रोत दल की ओर से सीधी व्यवस्था करना, कार्यक्रम में नई जान डाल देता। स्रोत दल ने शिक्षकों के साथ वह आदेश फिर से साझा किया कि विद्यार्थियों को प्रयोग करवाने में जिस-जिस सामग्री की कमी हो, उनकी पूर्ति के लिए शासन द्वारा लोकल फंड से खर्च का प्रावधान किया गया था। यह अपने आप में विज्ञान शिक्षण को जीवन्त बनाए रखने में बहुत मददगार साबित हुआ। स्थानीय स्तर पर सामग्री की खरीदी अब ज़रूरत पड़ने पर शाला के लोकल फण्ड से की जा सकती थी।

जब स्रोत दल के सदस्य स्कूलों में जाते या मासिक बैठकों में मिलते, तो कक्षा शिक्षण, बच्चों की समझ, किट वगैरह को लेकर विस्तृत बातचीत होती। इस बातचीत का सबसे बड़ा फायदा यह होता कि शिक्षकों की समझ और शिक्षा के प्रति नज़रिए को विस्तार मिलता। दूसरी ओर, स्रोत दल के लोग जब मासिक बैठकों में विषयवस्तु को लेकर प्रस्तुतीकरण करते तो शिक्षकों के दक्षतावर्धन में इज़ाफा होता। इस तरह यह फीडबैक दोतरफा होता, जिससे स्रोत दल को स्कूलों की शिक्षण प्रक्रियाओं के बारे में पता चलता रहता और इस आधार पर कार्यक्रम के क्रियान्वयन का ताना-बाना लगातार विकसित होता रहता।

कालू राम शर्मा (1961-2021): अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन में कार्यरत थे। स्कूली शिक्षा पर निरन्तर लेखन किया। फोटोग्राफी में दिलचस्पी। *एकलव्य* के शुरुआती दौर में धार एवं उज्जैन के केन्द्रों को स्थापित करने एवं मालवा में विज्ञान शिक्षण को फैलाने में अहम भूमिका निभाई।

सभी चित्र: शैलेश गुप्ता: आर्किटेक्ट और चित्रकार जो आज भी बचपन को संजोए रखना चाहते हैं। एमआईटीएस, ग्वालियर से आर्किटेक्चर की पढ़ाई। कहानियाँ सुनने और सुनाने का शौक है। भोपाल में रहते हैं।

बच्चों ने बनाई किताबें

मीनू पालीवाल

बच्चों में रचनात्मक कौशल विकसित करने के दृष्टिकोण और पढ़ना सीख रहे बच्चों के लिए पाठ्य सामग्री बनाने के उद्देश्य से बच्चों से किताबें बनवाने का बीड़ा उठाया गया। हमारा मानना था कि पढ़ना सीख रहे बच्चों के लिए अन्य किताबों के मुकाबले, इस तरह की दूसरे बच्चों द्वारा बनाई किताबों को पढ़ना आसान होगा क्योंकि उनमें परिचित सन्दर्भ होगा और शब्द भी ऐसे होंगे जो बच्चे रोज़मर्रा में बोलते हैं। इस लेख के माध्यम से किताबें बनवाने के उन अनुभवों को आपके साथ साझा कर रही हूँ।

बच्चों संग किताब

किताब बनाने का काम कक्षा-3 से 5 के बच्चों के साथ अलग-अलग स्कूलों में किया गया। इसके लिए हर स्कूल में डेढ़ से दो घण्टे दिए गए। बच्चों को यह बात बहुत अजीब और आश्चर्यजनक लग रही थी कि वे भी किताब बना सकते हैं। शुरुआत में बच्चों को बरखा सीरीज़ की किताबें दिखाई गईं और उनसे कहानियाँ सुनाने को कहा। फिर उनसे कहा कि "जो कहानी आपको आती है, अब उसे लिखकर इन किताबों जैसी ही किताब बनाइए।" इसके लिए बच्चों को ए-4 साइज़ के 2 कागज़ दिए गए जिन्हें बीच से मोड़कर कुल 8 पन्नों की किताब बनानी थी। इस किताब में उन्हें हर पन्ने पर एक चित्र बनाना था और उसके नीचे कहानी की एक या दो लाइनें लिखनी थीं। अक्सर बच्चे इस कोशिश में लग जाते हैं कि चित्र अच्छे बनें इसलिए मैंने बच्चों को निर्देश दिया था कि वे एक ही बार में चित्र बनाएँ, मिटाने का काम बिलकुल भी न करें।

किताबों में विविधता

- कुछ बच्चों ने सिर्फ एक ही चित्र बनाया। जैसे किसी ने अपने पसन्दीदा कार्टून का चित्र बनाया तो किसी ने गुलदस्ता। फिर उन्होंने चित्र से सम्बन्धित कुछ वाक्य लिखे, जैसे- यह एक गुलदस्ता है। यह घरों की सुन्दरता बढ़ाता है। यह देखने में अच्छा लगता है।
- कुछ बच्चों ने एक ही चित्र बनाया लेकिन उस पर वाक्य लिखने की बजाय पूरी कहानी लिख दी। मसलन, एक बच्चे ने एक पेड़ और उस पर बैठी चिड़िया बनाई। फिर पाँच लाइनों में इस चित्र पर कहानी लिख दी – एक पेड़ पर

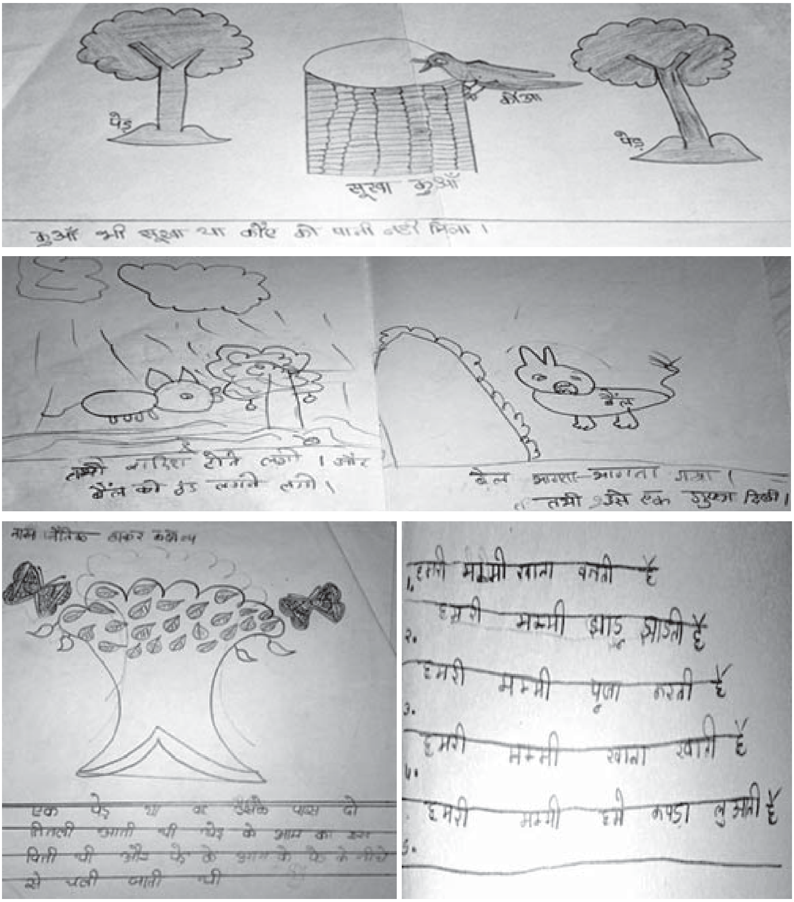

बच्चों द्वारा बनाई गई किताबों के कुछ चित्र

एक चिड़िया बैठी थी। वह आम खा रही थी। एक साँप आया। वह पेड़ की पोल में पिड़ गया। सारे आम ज़हरीले हो गए, चिड़िया मर गई।

- कुछ अन्य बच्चों ने भी कहानी बनाने की कोशिश की परन्तु उनका लेखन कहानी के रूप में नहीं आ पाया।
- कुछ बच्चों ने बरखा सीरीज़ की तर्ज पर कहानी की पूरी किताब बनाई।

कक्षा 4 के एक बच्चे ने कौए और साँप पर कहानी बनाई। आइए, इस बच्चे के काम का विश्लेषण करते हैं।

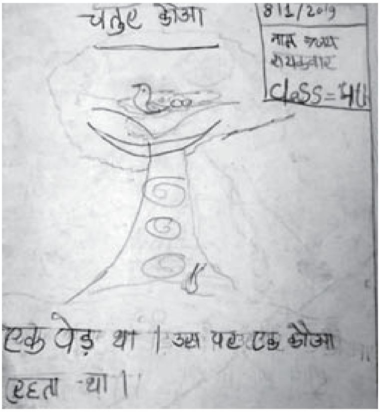

चित्र 1

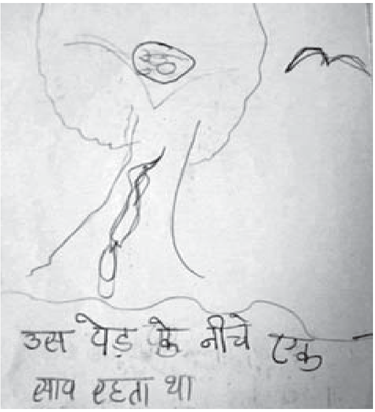

चित्र 2

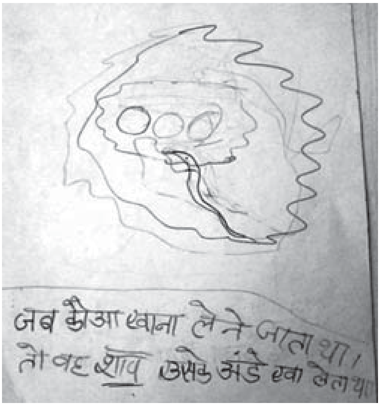

चित्र 3

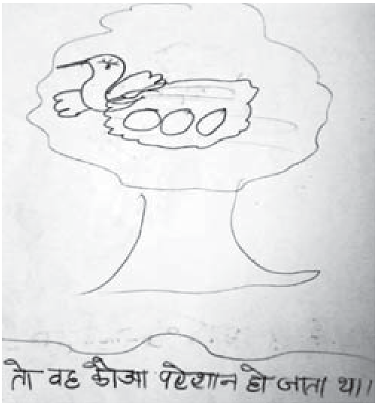

चित्र 4

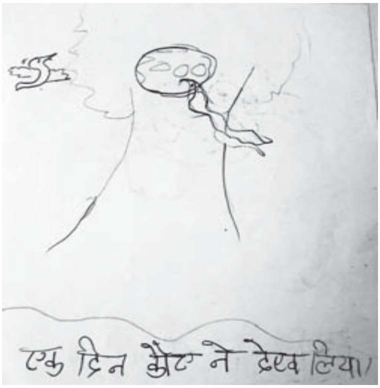

चित्र 5

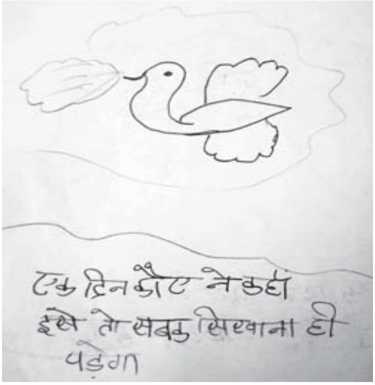

चित्र 6

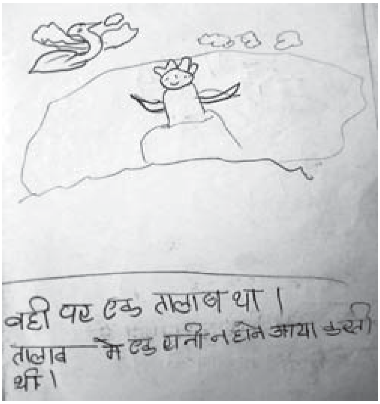

चित्र 7

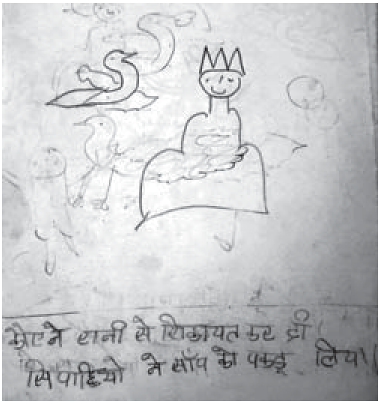

चित्र 8

इस किताब में ध्यान देने योग्य कुछ बातें:

चित्र 1 - पहले चित्र में एक कौआ आराम-से पेड़ पर अपने घोंसले में बैठा हुआ है। चित्र मिटाए बिना, एक ही बार में बनाया गया है।

चित्र 2 - दूसरे चित्र में साँप को घोंसले की ओर और कौए को घोंसले से दूर जाते हुए चित्रित किया गया है। इस चित्र के नीचे लिखा है - 'उस पेड़ के नीचे एक साँप रहता था'। इस पन्ने पर आप देख सकते हैं कि चित्र पाठक को आगे की कहानी का आभास दे रहा है। चित्र सिर्फ वही नहीं दर्शा रहा है जो नीचे लिखा है। इस चित्र में कौए पर ध्यान दीजिए, आपको एहसास होगा कि कौआ अपने घोंसले से काफी दूर उड़ रहा है। द्विआयामी चित्र में यह दर्शा पाना आसान काम नहीं है।

चित्र 3 - तीसरे चित्र को देखकर बहुत आनन्द आता है। आप देख सकते हैं कि चित्र में सिर्फ घोंसले को फोकस में रखा गया है। इस चित्र में पेड़ बनाने की ज़रूरत महसूस नहीं की गई। यह बात चौथी कक्षा का बच्चा समझ रहा है। यह चित्र बताता है कि बच्चे की अवलोकन और मानसिक चित्रण की क्षमता काफी सशक्त है। हम बच्चों के रोज़मर्रा के कामों को देखकर ही बच्चे को बेहतर रूप से समझ सकते हैं। सतत आकलन इसी वजह से महत्वपूर्ण होता है।

चित्र 7 – इस चित्र में रानी को दर्शाने के लिए उसके सिर पर मुकुट बनाया गया है।

चित्र 8 – इस पन्ने पर आप देख सकते हैं कि बहुत बार मिटाने का काम किया गया है। यदि आप कहानी से परिचित हैं तो क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि इतनी बार, और

इतना सारा मिटाने एवं बनाने का काम क्यों किया गया होगा?

आगे की कहानी संक्षेप में बता देती हूँ - कौआ रानी का हार चुरा लेता है और साँप के बिल में रख देता है। रानी अपने सिपाहियों से हार ढूँढने को कहती है। सिपाही साँप को मारकर हार वापस ले आते हैं।

किताब के सात पन्ने इस्तेमाल हो चुके थे। केवल एक ही पन्ना बाकी था और कहानी अभी बहुत सारी बची थी। मैं बहुत समय से बच्चे को मिटाने और बनाने के संघर्ष में लगे हुए देख रही थी। आपको बच्चों को संघर्ष करने का वक्त ज़रूर देना चाहिए क्योंकि बिना मेहनत के कोई क्षमता विकसित नहीं होती। शिक्षक द्वारा बच्चों को सीधे-सीधे उत्तर बता देना, बच्चे से सोचने का अवसर छीन लेता है और शिक्षण को एक अरुचिकर और क्लेरिकल काम बना देता है। इसका मतलब यह नहीं कि हमें उत्तर कभी बताना ही नहीं चाहिए। कहने का आशय सिर्फ इतना है कि बच्चों को सीधे-सीधे उत्तर बताने की बजाय शिक्षक को बच्चों को उत्तर तक ले जाने के लिए प्रश्नों और संकेतों का सहारा लेना चाहिए जिससे बच्चों को दिमागी कसरत करने का मौका मिले क्योंकि हम कोई भी पाठ सिर्फ उसमें दी गई जानकारी याद करवाने के लिए नहीं पढ़ा रहे हैं। उस पाठ के द्वारा हम बच्चों में तर्क, विश्लेषण, अवलोकन, सम्प्रेषण करना जैसी बहुत-सी क्षमताएँ विकसित करने का प्रयास कर रहे हैं।

कुछ देर बाद मैंने बच्चे से पूछा कि वह किस उलझन में है। मेरा अनुमान सही था, वह कहानी के काफी बड़े हिस्से को एक ही पन्ने पर उकेरने की कोशिश में था। मैंने उससे पूछा, “क्या हम कहानी को किसी और तरह खत्म कर सकते हैं?” थोड़ा रुककर मैंने फिर कहा, “क्या रानी से साँप की शिकायत करने से काम बन सकता है?” बच्चे ने थोड़ा सोचकर कहा, “हाँ, कहानी में ऐसा कर सकते हैं।”

यह सब देखकर हम यकीनन कह सकते हैं कि किताब बनाने में बहुत-से कौशलों पर काम होता है जैसे कि

- मानसिक-चित्रण (visualization)
- कहानी को वाक्यों में पिरोना
- कहानी की बातों को तार्किक क्रम में लगाना
- रचनात्मक कौशल
- शीर्षक देना
- अपनी बात को संक्षेप में लिखना

किताबों पर शिक्षकों की प्रतिक्रिया

काफी बच्चों ने अपनी-अपनी तरह से किताबें बनाई थीं। बहुत-से बच्चों का लेखन कहानी के ढाँचे में था ही नहीं। कुछ बच्चे चित्र नहीं बना पाए, तो कुछ बच्चों ने सिर्फ चित्र ही बनाए। दस-बारह किताबों में से कौआ और साँप की कहानी वाली किताब सबसे बढ़िया तरीके से तैयार

हुई थी। इस बच्चे को ज़रूर किताबों और टीवी में कार्टून का अच्छा एक्सपोज़र रहा होगा तभी वह एक अच्छा प्रयास कर पाया था। मैंने यह किताब कई शिक्षकों को दिखाई। वे जल्दी-जल्दी पन्ने पलटते हुए किताब को देखते और कहते, “हाँ, अच्छी बनी है किताब।” मुझे यह किताब पहली बार पढ़ने में काफी समय लगा। ध्यान देने और खुश होने लायक उसमें कितनी सारी बातें थीं। कुछ शिक्षकों ने इस किताब को तसल्ली से देखा जो एक सुखद अनुभव था। पर सबसे पहले मैंने यह किताब उसी बच्चे के स्कूल की प्राचार्या को दिखाई। उनकी सबसे पहली टिप्पणी थी कि बच्चे ने दूसरे

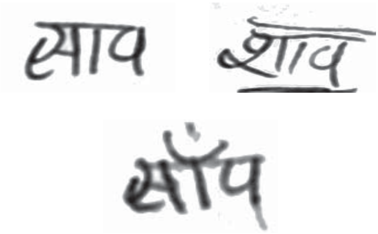

पन्ने पर ‘साँप’ को ‘साप’ लिखा है। उन्होंने बच्चे को बुलाकर कहा, “साँप लिखकर दिखाओ।” मैंने मैडम से अनुरोध किया कि हम थोड़ा बात कर लेते हैं फिर बच्चे को वापस बुलाते हैं। इसके बाद मैंने मैडम को कहानी में तीन जगह साँप लिखा हुआ दिखाया।

आकलन लेखन का या वर्तनी का?

आप देख सकते हैं कि बच्चे ने सही वर्तनी लिख ली है। ज़रा सोचें, क्या लेखन के आकलन में वर्तनी की गलतियाँ निकालना सबसे आसान काम नहीं होता है? यकीनन यह काम दसवीं, बारहवीं का कोई भी बच्चा आसानी-से कर सकता है, परिवार का कोई बड़ा सदस्य भी कर सकता है। फिर शिक्षक होने के नाते क्या आकलन यहीं तक सीमित होना चाहिए? जब मैं स्कूल में पढ़ती थी तब भी इसी पक्ष पर ज़ोर ज़्यादा होता था और आज भी यही जारी है। मन से लिखने के अवसर शायद ही कभी मिले हों, तो लेखन के भाव और वैचारिक पक्ष का आकलन होने का सवाल ही नहीं उठता।

गलतियों को लेकर यह सोच बहुत गहरी जड़ें जमा चुकी है कि यदि बच्चे को बताएँगे नहीं कि सही क्या है तो उन्हें कभी पता ही नहीं चलेगा, और वे हमेशा वही गलती दोहराते रहेंगे। यह बात कुछ सन्दर्भों में सही होने के साथ-साथ कितनी हास्यास्पद है, इसे समझने के लिए ज़रा इस बात को खुद पर लागू करके सोचें। क्या आप आज भी वही गलतियाँ करते हैं जो आप पहले कभी किया करते थे? क्या कोई गलती अवसर मिलने पर सुधारी? क्या कभी ऐसा हुआ कि अवसर मिलने से जो गलतियाँ सुधारीं, उसने सीखने के

प्रति हमारे रवैये को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया? सिर्फ गलतियाँ निकालने से हम सीखने के प्रति बच्चे के रवैये को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहे होते हैं।

आपने बच्चे की किताब में 'साँप' की तीन तरह की वर्तनी देखीं। बच्चा साँप की अलग-अलग वर्तनी शायद इसीलिए लिख रहा था क्योंकि साँप की जो वर्तनी उसने लिखी थी, वह उसकी विज़ुअल मेमोरी से मैच नहीं हो रही होगी। वरना वह कहानी में हर जगह 'साँप' की गलत वर्तनी 'साप' ही लिख रहा होता।

बच्चों द्वारा लिखित किताबें

बच्चों के लिए किताबें हमेशा वयस्क चुनते हैं। लेखन भी वयस्क ही करते हैं। बच्चों और बड़ों की दुनिया थोड़ी-बहुत अलग तो होती ही है। सोचती हूँ कि यदि बच्चे ही किताब लिखते और दूसरे बच्चे उन्हें पढ़ पाते तो शायद बच्चों में पढ़ने की आदत विकसित करना आसान होता। अमेरिका के इडाहो शहर में रहने वाले कक्षा-2 के एक बच्चे दिलोंन हेलबिग की किताब को पढ़ने के लिए लाइब्रेरी में लम्बी लाइन लगी थी। उसने अपने द्वारा लिखी 81 पन्नों की किताब को चुपचाप से लाइब्रेरी में रख दिया था। जब उसने यह बात अपने घर में बताई तो उसके माता-पिता ने वह किताब लाइब्रेरी से वापस माँगनी चाही। तब उन्हें लाइब्रेरी संचालक से पता चला कि दिलोंन की किताब *The adventures of Dillon Helberg* बच्चों को बहुत पसन्द आ रही है और उस किताब को *whoodini* अवॉर्ड से भी नवाज़ा गया है।

इसी तर्ज पर भोपाल में *मुस्कान* संस्था बच्चों के लिए, बच्चों द्वारा रचित कहानियाँ प्रकाशित कर रही है। *बस्ती में चोर, मिट्टी, पायल खो गई, the pardhi rule, going to school* आदि जिनमें बच्चों की अपनी दुनिया की झलकियाँ हैं। इस तरह की किताबें बच्चों में किताबों के प्रति झुकाव बनाने में काफी मददगार साबित हो सकती हैं।

मीनू पालीवाल: अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, सागर, म.प्र. में 2017 से 2022 तक काम किया। इससे पहले वे छह वर्ष तक आईसीआईसीआई बैंक में कार्यरत रहीं। मन में आने वाले सवालों के जवाब की तलाश में वे शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। प्राथमिक कक्षा के बच्चों के साथ काम करने में विशेष रुचि। वर्तमान में *मुस्कान* संस्था, भोपाल में कार्यरत।

सभी फोटो: मीनू पालीवाल।

एक जगह होने के लिए

शिक्षा में कला के प्रतिनिधि के रूप में लाइब्रेरी

समीना मिश्रा

निक्की जिओवान्नी की कविता 'अ लाइब्रेरी (केली मार्टिन के लिए)' में लाइब्रेरी एक जगह है –

टु सर्फ द रेनबो / सतरंगी लहरों पर सवार होने के लिए
टु सेल द ड्रीम्स / सपनों की उड़ान भरने के लिए
टु बी ब्लू / उदासी के लिए
टु बी जैज़ / उमंग के लिए
टु बी वंडरफुल / शानदार होने के लिए
टु बी यू / तुम्हारे होने के लिए
अ प्लेस टु बी / एक जगह होने के लिए
येह... टु बी / हाँ... होने के लिए

ये पंक्तियाँ तो कला के बारे में भी हो सकती हैं। क्या कला सतरंगी लहरों पर सवार होने और सपनों की उड़ान भरने में हमारी मदद नहीं करती? क्या कला हमें उदासी और उमंग बयान करने नहीं देती? क्या कला हमारे लिए यह मुमकिन नहीं करती कि हम – हो सकें? होना दिल और दिमाग, दोनों से जुड़ा है; यह एहसासों और विचारों का एक जटिल जाल-सा है। कला हमारी इन्द्रियों के ज़रिए इन दोनों को छूती है – हम जो कुछ देखते और सुनते हैं, वह हमें कुछ एहसास कराता है, और बदले में वह एहसास हमें सोचने के लिए उकसाता है। इसे होता हुआ देखने का एक तरीका है – बच्चों के साथ पिक्चर बुक्स का इस्तेमाल।

लाइब्रेरी शिक्षक, जोऐन सलडान्हा ने मिडिल-स्कूल के बच्चों के साथ *जामलो वॉक्स* (हिन्दी में अनुवादित: *जामलो चलती गई*) के इस्तेमाल के बारे में लिखा है। यह 2020 के लॉकडाउन में बच्चों के अनुभवों के बारे में एक चित्र-प्रधान किताब है। अपने ब्लॉगपोस्ट में, सलडान्हा बताती हैं कि बच्चों के बीच यह किताब पढ़ने से पहले, किस तरह उन्होंने बच्चों से लॉकडाउन के उनके अपने अनुभवों पर बातचीत करके गैर-बराबरी और

खोने के भाव से जुड़ी मुश्किल बातचीत के लिए सन्दर्भ स्थापित किया। फिर उन्होंने किताब के हर पन्ने पर वक्त गुज़ारा, बच्चों को प्रोत्साहित किया, न सिर्फ लिखे को पढ़ने के लिए बल्कि चित्रों को पढ़ने और उनकी व्याख्या करने के लिए भी। इससे मेल-बेमेल कई नज़रिए उभरे। भले ही बातचीत खुली-खुली ही रही, मगर बच्चों की प्रतिक्रियाओं में जो साफ ज़ाहिर है, वह है एहसासों और विचारों के बीच की अन्तर्क्रिया:

इस चित्र को देखकर मुझे लग रहा है कि मैं भी उसी सड़क पर चल रही हूँ। बहुत गर्मी है।

जामलो काम क्यों कर रही है? यह तो गैरकानूनी है न, आंटी?

आंटी, मैं सोचा करता था कि कहीं मेरे मम्मी-पापा ने लॉकडाउन मन से तो नहीं गढ़ा... राहुल के जैसे, मैं भी खिड़की पर खड़ा होता और झाँका करता कि बाहर क्या हो रहा है।

आंटी, यह किताब मुझे उदास कर रही है... मुझे लगता है कि मैं एक बिगड़ी हुई बच्ची हूँ।

मैंने पहले कभी इसके बारे में नहीं सोचा पर अब मैं सोच रही हूँ कि हम सबका एक नाता है, नहीं? हम सभी के बीच कुछ-न-कुछ तो समान है, भले ही हम सभी एक-जैसे न हों।

कला की काबिलियत

जब एक बच्ची (या वयस्क) किसी अनुभूति के साथ प्रतिक्रिया करती है

– खुशी, उदासी, डर, उमंग... कैसी भी अनुभूति – तो उससे एक समझ विकसित होने की शुरुआत मुमकिन होती है। रचनात्मक विचार कहाँ से आते हैं, जिस तरह इसके पीछे एक रहस्य का अंश होता है, उसी तरह एकदम सटीक प्रतिक्रिया जगाने का तरीका तय करना भी मुश्किल होता है। हालाँकि, ऊपर साझा की गई बच्चों की प्रतिक्रियाएँ इशारा करती हैं कि खिड़की पर खड़े किसी बच्चे का चित्र, कितनी आसानी-से, पढ़ने वाले के अपने अनुभव से एक कड़ी जोड़ सकता है, एक मिलता-जुलता अनुभव जहाँ वह भी लॉकडाउन की दुनिया में झाँका करता था।

ये प्रतिक्रियाएँ इशारा करती हैं कि मुश्किलों से जूझती एक बच्ची की दास्तान, पढ़ने वाले को ज़िन्दगियों के बीच का अन्तर दिखा सकती है और 'एक बिगड़ी हुई बच्ची' की तरह महसूस करा सकती है; हमें इन्सानियत के तौर पर क्या जोड़ता है, चित्र और लेख साथ मिलकर हमें ऐसे सवालों और विचारों की ओर धकेल सकते हैं। कला की यह अन्तर्निहित काबिलियत ही है – हमारी इन्द्रियों के साथ अन्तःक्रिया करने की, अनुगूँज विकसित करने की और चिन्तन को उभारने की – जो इस बात पर ज़ोर डालती है कि क्यों लाइब्रेरी को शिक्षा में कला का प्रतिनिधि होना चाहिए। जब एक लाइब्रेरी – या सीखने की कोई भी जगह – कला के लिए अपने द्वार खोलती है, तो इससे इन्द्रिय और भावनात्मक अनुभूति के लिए भी द्वार खुलता है। और यही अनुभूति समालोचनात्मक चिन्तन की ओर ले जाती है। इससे कलाकृति के अर्थ और मूल्य को भी विस्तार मिलता है, एक परस्पर जुड़ाव का जन्म होता है, रचयिता और रचना से जुड़ने वालों के बीच, एक समुदाय का निर्माण होता है।

कला और लाइब्रेरी के रिश्ते के लिए नज़रिया बेहद ज़रूरी है। एक कला इतिहासकार, ईएच गॉमब्रिक, ने कहा था – "कला जैसी सचमुच कोई चीज़ नहीं होती। होते हैं तो बस कलाकार।" कला के रचयिताओं को प्राथमिकता देने का अर्थ आवाज़ों और अनुभवों की बहुलता को स्वीकारना है, और बुनियादी स्तर पर दुनिया की हमारी समझ को इससे आकार लेने देना है। किसी लाइब्रेरी की ताक पर बहुलता की सम्भावना भी रखी होती है – तब ही, जब इसके संग्रह का मार्गदर्शन एक समालोचनात्मक और आत्म-चिन्तनशील अभ्यास करे। इसी अभ्यास को और भी व्यापक होने की ज़रूरत है ताकि लाइब्रेरी कला के बेशुमार रूपों का भी भण्डारघर बन सके। किताबें कला हैं – वे कला के अन्य रूपों की ही तरह रचनात्मक प्रक्रियाओं और सवालों से उभरती हैं। तो यह महज़ एक और कदम है,

लाइब्रेरी में किताबों के परे कुछ शामिल करने का। फिल्मों का संग्रह शामिल करना, दीवारों पर कला प्रदर्शित करना, इनके इर्द-गिर्द गतिविधियाँ आयोजित करना, कलाकारों-अदाकारों को सदस्यों से मेल-जोल करने के लिए बुलाना – ये सब लाइब्रेरी में कला के विचार को विस्तृत करने के तरीके हैं। जिसकी ज़रूरत है, वह है एक ऐसा नज़रिया जो कर्म को दिशा दिखाए, वही नज़रिया जो उन सब में विकसित होगा जो लाइब्रेरी में आएँगे, लाइब्रेरी और उसके संग्रह से अन्तःक्रिया करेंगे।

जब हम शिक्षा में कला की बात करते हैं, तो यह याद रखना ज़रूरी है कि मकसद सभी को कलाकार में तब्दील कर देने का नहीं है, बल्कि उनकी नज़र को कलात्मक रंग देने का है। कला और रचनात्मक अभ्यासों से जुड़ने के मौकों से एक रसिक के दृष्टिकोण – यानी कला की कद्र करने और कला से तृप्त होने की काबिलियत – को बढ़ावा मिलता है। कला दर्शक/श्रोता/खोजी को अपनी नज़र फिर से मिलाने, आत्म और अन्य के अनुभवों के बीच के सम्बन्ध खोजने, और जीने में निहित खूबसूरती, फिर चाहे वह अँधेरी या उदास किस्म की खूबसूरती क्यों न हो, के प्रति सजग रहने की इजाज़त देती है। लाइब्रेरी एक ऐसी जगह हो सकती है जो इन सम्भावनाओं को संग्रहित करती हो, इस पर ध्यान केन्द्रित करके कि वह कला क्या है जो साझा है और वे कौन-से रास्ते हैं जिनसे इसे खोजा जाता है।

लॉकडाउन में लाइब्रेरी अभ्यास

बच्चों के साथ मेरा काम कला के इस खिड़की और आईने नुमा पहलू पर केन्द्रित होता है, और कोशिश करता है कि उनके साथ बराबरी की भावना से अन्तःक्रिया करे जो हर किस्म के एहसासों का अनुभव करते हैं, अँधेरे एहसासों का भी। अनौपचारिक और औपचारिक, दोनों ही जगहों में, मैं बच्चों के साथ भाषा, चित्र और ध्वनि का इस्तेमाल आत्मचिन्तन और संवाद की प्रक्रिया को बढ़ावा देने के लिए करती हूँ। मैं कला और शिक्षा पर एक ऑनलाइन स्पेस, द मैजिक की सेंटर फॉर द आर्ट्स एंड चाइल्डहुड (The Magic Key Centre for the Arts and Childhood), भी चलाती हूँ, और हालाँकि यह कोई लाइब्रेरी नहीं है, तब भी मुझे इस तरह सोचना अच्छा लगता है कि एक लाइब्रेरी अभ्यास इसे गाइड करता है। मेरे लिए, इसके दो पहलू हैं – खोजबीन और संग्रहण (क्यूरेशन)।

मार्च 2020 में जब कोविड-19 लॉकडाउन का ऐलान हुआ था, मैंने एक ऑनलाइन आर्ट प्रोजेक्ट शुरू किया जिसमें मैं हर दिन एक कला अभ्यास/गतिविधि साझा करती, जिसे भागीदार अगले 24 घण्टों में पूरा करते। ये अभ्यास कविता लेखन, चित्रकारी, तस्वीरें खींचने से लेकर आवाज़ें और वीडियो रिकॉर्ड करने तक होते। कभी-कभार उन्हें गतिविधि करने से पहले कुछ पढ़ना या देखना पड़ता। हर अभ्यास लॉकडाउन के विचार से जुड़ा होता, बच्चों से उनके और उनके आसपास के लोगों के अनुभवों का अवलोकन और उन पर चिन्तन करने का आग्रह करता। इन अभ्यासों के ज़रिए, बच्चे अपने अनुभव अभिव्यक्त करने के अलग-अलग रास्ते तलाश पाए। मुझे लगता है, इससे उनकी इस समझ में इज़ाफा हुआ कि वे और पूरी दुनिया आखिर किस से गुज़र रहे थे। लॉकडाउन की आवाज़ों के बारे में लिखने के एक अभ्यास में, एक 12 वर्षीय ने खोने के एहसास को जागृत किया:

लॉकडाउन में मैंने सुनी
घड़ी की टिक-टॉक,
लॉकडाउन में मैंने सुनी
पंछियों की चहक।
लॉकडाउन में मैंने सुनी
दोपहरों की शान्त चुप्पी,
लॉकडाउन की रातों में मैंने सुनी
उल्लुओं की हूट।
किस तरह मैं उम्मीद करता हूँ
सुनने को डोरबेल – डिंग-डाँग!

जो बच्चे लॉकडाउन आर्ट प्रोजेक्ट का हिस्सा थे, वे बेशक ऐसे बच्चे थे जिनके पास इंटरनेट और उपकरणों का विशेषाधिकार (या, प्रिविलेज) था, और साथ ही साथ अँग्रेज़ी-माध्यम की शिक्षा थी। इसलिए प्रोजेक्ट के लिए यह ज़रूरी था कि वह केवल आत्म पर केन्द्रित न होकर भागीदार बच्चों को व्यापक दुनिया की ओर देखने के

लिए भी प्रोत्साहित करे, अलबत्ता उनके लॉकडाउन के नज़रिए से। इसका अर्थ हुआ संसाधनों का – लेखों, कविताओं, फिल्मों का – एक नपातुला चुनाव, जो कभी-कभी प्रॉम्प्ट में मदद करे। उसी 12 वर्षीय ने, किसी अन्य के दृष्टिकोण से खुद को एक खत लिखने की गतिविधि के दौरान लिखा:

प्यारे रिद्धो,

जिस बिल्डिंग में तुम रहते हो, मैं उसके बाहर एक चाय की गुमटी पर काम करता हूँ। हो सकता है, तुम मुझे न जानते हो, पर मैं तुम्हें रोज़ स्कूल जाते हुए और पार्क में खेलते हुए देखता हूँ। कोरोना वायरस महामारी के कारण, मेरी पगार काटकर आधी कर दी गई है। मेरे माँ-बाप उत्तर प्रदेश में काम करते हैं और मैं उनसे सम्पर्क नहीं कर पा रहा। मेरे घर में, जहाँ मैं अपने भाई के साथ रहता हूँ, खाने की किल्लत है।

मैं तुम्हें लिख रहा हूँ क्योंकि मैं चाहता हूँ कि तुम जानो लॉकडाउन में बाहरी दुनिया किससे गुज़र रही है। हो सकता है, तुम लॉकडाउन के दौरान खुश हो, मगर हर कोई तुम्हारे जितना खुश नहीं है।

- अर्जुन

पिछले सालभर से, ‘द मैजिक की सेंटर’ का काम हमारे सोशल मीडिया हैंडल के ज़रिए ऑनलाइन संसाधनों को साप्ताहिक रूप से शेयर करने और उनसे प्रभावित विचारों पर चिन्तन करने तक सीमित हो गया है। यह सोचते-सोचते कि हमारे द्वारा हर हफ्ते क्या पोस्ट किया जाए, मैंने कई किताबें, फिल्में, बच्चों की प्रतिक्रियाएँ,

कविताएँ, चित्र, पॉडकास्ट चर्चाएँ, और संग्रहित साक्षात्कार खोज निकाले हैं। सालभर के पोस्ट्स का संग्रह विविधता से भरा है, और साथ ही, जिज्ञासा और खोजबीन के जज़्बे से बँधा हुआ है। एक बेतरतीब कोशिश यह समझने की भी होती है कि कैसे अलग-अलग लोगों – वयस्क और बच्चों – ने कला के साथ अलग-अलग भूमिकाओं में अन्तःक्रिया की है। पोस्ट्स में एरिक कार्ल, केजी सुब्रह्मण्यम और माया एंजेलो जैसे कलाकारों की रचनाओं के साथ-साथ बच्चों की रचनाएँ – लेख, ऑनलाइन नाटक, या महज़ स्कूल के खेल के मैदान को याद करती हुई, नए साल की उनकी ख्वाहिशों से जुड़ी, या उनकी खुशियों पर विचार करती बातचीत – भी शामिल हैं।

कला की सांत्वना

यह है ज़िन्दगी – कला के चश्मे से देखी गई ज़िन्दगी, सार और रूप का संगीत – जो हमें याद दिलाती है कि जीने का मतलब है कौतूहल से भरे रहना, गौर करना और चिन्तनशील रहना। कला यह करती है। लाइब्रेरी यह करती है।

विंसेंट वैन गॉग ने कहा था, “कला उनके लिए सांत्वना है जो ज़िन्दगी से टूट चुके हैं।” और हम ऐसी अनगिनत कहानियाँ जानते हैं जहाँ किस तरह लाइब्रेरियों ने उन्हें बचाया जो ज़िन्दगी से टूट चुके थे। एक लाइब्रेरी से बेहतर जगह और कहाँ होगी, खूबसूरती और सत्य की उस अनेकता को अनुभव करने के लिए जो कला हम तक लाती है।

समीना मिश्रा: नई दिल्ली में एक वृत्तचित्र फिल्म निर्माता, लेखक और शिक्षक हैं, जिनकी बच्चों के लिए और बच्चों से सम्बन्धित मीडिया में विशेष रुचि है। उनका काम बचपन, पहचान और शिक्षा के नज़रिए से भारत में पलने-बढ़ने के अनुभवों को प्रतिबिम्बित करता है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: अतुल वाधवानी: *एकलव्य* की शिक्षा साहित्य टीम के साथ सम्बद्ध हैं। साथ ही, *संदर्भ* पत्रिका के साथ भी जुड़े हैं।

सभी चित्र: पूजा मेनन: *एकलव्य,* भोपाल में बतौर जूनियर ग्राफिक डिज़ाइनर काम किया है। वर्तमान में, स्वतंत्र रूप से चित्रकारी कर रही हैं।

यह लेख *टीचर प्लस* पत्रिका के अंक दिसम्बर, 2021 से साभार।

सन्दर्भ:

Giovanni, Nikki, A Library (For Kelli Martin), via brainpickings.org
https://www.brainpickings.org/2015/12/11/nikki-giovannis-poems-library-librarians/
Mishra and Aziz, Jamlo Walks, 2021, India Puffin
मिश्रा और अज़ीज़, जामलो चलती गई, 2021, एकलव्य
Saldanha, JoAnne, Journeying with Jamlo, July 2021
https://www.mythaunty.com/post/journeying-with-jamlo

संज्ञाओं की जाँच-पड़ताल

रमा कान्त अग्निहोत्रि

साल-दर-साल छात्रों को पढ़ाया जाता है कि ‘संज्ञा किसी व्यक्ति, स्थान या वस्तु का नाम है’। यह परिभाषा केवल इतना बताती है कि संज्ञा एक नाम है। यह उन्हें इस बारे में कुछ भी नहीं बताती कि संज्ञाएँ वास्तव में क्या हैं, उनके गुण क्या हैं और भाषा में वे क्या भूमिका निभाती हैं। छात्र और शिक्षक संज्ञाओं के बारे में अवचेतन रूप से पहले से ही बहुत कुछ जानते हैं। इस बात की भी कोई कोशिश नहीं की जाती कि उस अवचेतन ज्ञान के बारे में कुछ छान-बीन की जाए। यह छान-बीन अध्यापकों और छात्रों के लिए लाभदायक होगी और वे संज्ञाओं और संज्ञा-पदों की प्रकृति, गुणों और भूमिका को समझना शुरू कर देंगे; उन्हें इस बात का भी बोध होने लगेगा कि जो बात अँग्रेज़ी में noun के मामले में सही है, वही अन्य भाषाओं में संज्ञा के बारे में भी सही है। बहुभाषिकता में मूलबद्ध सही शैक्षणिक तकनीकों की बदौलत वे कक्षा में उपलब्ध अन्य भाषाओं में संज्ञा के इन पक्षों को जाँचने लगेंगे।

कुछ चीज़ें होती हैं जिन्हें आप संज्ञाओं के साथ कर सकते हैं, और कुछ ऐसी जो आप नहीं कर सकते। आप noun के पहले ‘a, an, the’ का या ‘this, that, these, those’ (‘यह, वह, ये, वे’) जैसे संकेत वाचक सर्वनामों का प्रयोग कर सकते हैं, जैसेकि ‘a girl’, ‘that girl’ (‘एक लड़की’, ‘वह लड़की’)। संज्ञा (पद) के बाद एक पूरा वाक्यांश जोड़ा जा सकता है, जैसे कि ‘those four girls who are playing football’ (‘वे चार लड़कियाँ जो फुटबॉल खेल रही हैं’)। किसी भी तरह की अँग्रेज़ी में यह कहना व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध होगा कि ‘four those tall girls who are

playing football' ('चार वे लम्बी लड़कियाँ जो फुटबॉल खेल रही हैं')।

इस तरह, आप संज्ञाओं को बहुवचन बनाते हैं, उन्हें एक निश्चित क्रम में आर्टिकल्स (a, an, the), संकेतवाचकों, संख्यावाचकों और विशेषणों से विशेषीकृत करते हैं। आप यही सब हिन्दी संज्ञा लड़की के साथ भी कर सकते हैं। यह कहना कि 'वे चार लम्बी लड़कियाँ जो फुटबॉल खेल रही हैं', व्याकरण की दृष्टि से एकदम शुद्ध होगा।

अब, कुछ ऐसी चीज़ें हैं जो आप क्रियाओं के साथ तो कर सकते हैं, लेकिन संज्ञाओं के साथ नहीं कर सकते। 'girling' या 'girled' कहना व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध होगा, जबकि 'arriving' और 'arrived' कहना सही है। ध्यान दें कि आप 'girls' और क्रिया 'digs', दोनों के अन्त में ('s' के स्थान पर) 'z' ('ज़') की ध्वनि सुनते हैं, लेकिन इन दोनों मामलों में इसका मतलब नितान्त भिन्न है। 'girls' में वह बहुवचन की ओर संकेत करता है, लेकिन 'digs' में वह 'अन्य पुरुष, वर्तमान काल, एक वचन' के लिए प्रयुक्त है। इस अवचेतन ज्ञान से उलझने और समझने की बजाय, जो बच्चे स्कूल में पहले से ही अवचेतन स्तर पर लेकर आते हैं, हम उन्हें उस तरह की नीरस अवधारणात्मक परिभाषाएँ पढ़ाते हैं जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है।

विभिन्न भाषाओं पर काम करते हुए छात्रों को यह बात समझ में आ सकती है कि संज्ञा या तो कर्ता के रूप में काम कर सकती है या कर्म के रूप में जैसे कि 'लड़के फुटबॉल खेल रहे हैं' ('लड़के' [कर्ता] भी संज्ञा है और 'फुटबॉल' [कर्म] भी); 'मुझे वे बच्चे पसन्द हैं' आदि। भाषाओं में स्वामित्व को इंगित करने का भी एक ढंग होगा जैसे कि 'लड़के की पुस्तक'। कन्नड़ या कक्षा में उपलब्ध अन्य भाषाओं में स्वामित्व की ओर किस तरह संकेत किया जाता है? boys और boys' में क्या अन्तर है? उन्हें यह भी पता चलेगा कि इबारत के विकसित होने के साथ जो सर्वनाम संज्ञा की जगह ले लेते हैं, वे उस गोंद की तरह काम करते हैं जो इबारत को बाँधे रखती है।

इस तरह, किसी शब्द को किस नाम से पुकारा जाए, यह इस पर निर्भर करता है कि उस शब्द का इस्तेमाल किस तरह किया गया है। किसी शब्द या वाक्य का अर्थ निश्चय ही उस सन्दर्भ पर निर्भर करता है जिसमें उसका इस्तेमाल किया गया होता है लेकिन किसी शब्द की व्याकरणपरक कोटि भी निश्चित नहीं होती। शब्द की चार प्रमुख कोटियाँ हैं NAVA - Nouns (संज्ञा), Adjectives (विशेषण), Verbs (क्रिया) और Adverbs (क्रियाविशेषण)। 'close' जैसा साधारण शब्द जिसे सामान्य तौर पर स्कूल में क्रिया के रूप में

पढ़ाया जाएगा, वास्तव में NAVA कोटियों से सम्बन्धित हो सकता है। उदाहरण के लिए: 'Towards the close of the play she cried' (N) ('जब नाटक अन्त की ओर था, वह रो पड़ी थी' – संज्ञा); 'Only my close friends are coming to the party' (Adj.) ('केवल मेरे करीबी दोस्त ही पार्टी में आ रहे हैं' – विशेषण); 'She closed the door' (V) ('उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया' – क्रिया); 'Stay close to your mother' (Adv.) ('अपनी माँ के करीब रहो' - क्रियाविशेषण)। एक वेबसाइट ने ऐसे 56 शब्दों की सूची दी है जो NAVA समूह से सम्बन्धित हो सकते हैं। ऐसे शब्दों की संख्या तो बहुत बड़ी है जो अँग्रेज़ी में संज्ञा और क्रिया, दोनों हो सकते हैं। उदाहरण के लिए 'chair, copy, table, insult, nail, dance, bargain, favour, attack, cook' आदि।

दिलचस्प बात यह है कि भाषा के बारे में ज्ञान के ऐसे पक्ष किसी सुस्पष्ट अध्यापन की माँग नहीं करते; छात्रों और अध्यापकों, दोनों को ही यह ज्ञान पहले से होता है। अपर्याप्त अवधारणात्मक परिभाषाओं की बजाय, अध्यापकों को ऐसे चुनौतीपूर्ण कार्यों पर वक्त खर्च करने की ज़रूरत है जो इस तरह के ज्ञान की खोज की दिशा में ले जाएँ, और उसे अवचेतन से चेतन स्तर पर ले आएँ।

इस तरह के प्रयास के कई लाभ हैं। हर छात्र की भाषा को कक्षा में जगह मिलती है। आँकड़ों के पर्यवेक्षण, वर्गीकरण, कोटि-निर्धारण, विश्लेषण और निष्कर्ष प्रभावशाली हो उठते हैं और अपने समकक्षों के बीच काम करते हुए छात्र विश्वसनीय और प्रामाणिक अवधारणाओं तक पहुँचते हैं। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि छात्रों और शिक्षकों को इस बात का एहसास होगा कि सारी भाषाएँ समान रूप से व्यवस्थित हैं और समान सम्मान की पात्रता रखती हैं।

रमा कान्त अग्निहोत्री: दिल्ली विश्वविद्यालय से सेवा निवृत्त। व्यावहारिक भाषा-विज्ञान, शब्द संरचना, सामाजिक भाषा-विज्ञान और शोध प्रणाली पर विस्तृत रूप से पढ़ाया और लिखा है। 'नेशनल फोकस ग्रुप ऑन द टीचिंग ऑफ इंडियन लेंग्वेजिज़' के अध्यक्ष रहे हैं। आजकल विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर में एमेरिटस प्रोफेसर हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: मदन सोनी: आलोचना के क्षेत्र में सक्रिय वरिष्ठ हिन्दी लेखक व अनुवादक। इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। इन्होंने उम्बर्तो एको के उपन्यास *द नेम ऑफ दि रोज़*, डैन ब्राउन के उपन्यास *दि द विंची कोड* और युवाल नोआ हरारी की किताब *सेपियन्स: अ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ ह्यूमनकाइंड* समेत अनेक पुस्तकों के अनुवाद किए हैं।

चित्र: उर्वी: सृष्टि इंस्टिट्यूट ऑफ आर्ट एण्ड डिज़ाइन टेक्नोलॉजी, बैंगलोर से पढ़ाई। चित्रकार, विज़ुअल कलाकार और डिज़ाइनर हैं।

मूल अँग्रेज़ी लेख *डेकन हेराल्ड* अखबार के अंक मई 3, 2022 से साभार।

नया मानव

तृष्णा बसाक

ब्लॉक टू के शीशे की इमारत की उन्नीसवीं मंज़िल पर वे गुमसुम-से बैठे थे। वे, मतलब अरा और रेमो। यह मंज़िल काँच के अण्डे के आकार की इस इमारत के बीचों-बीच से कुछ नीचे थी। दीवार में ही इन-बिल्ट बैठने की व्यवस्था थी। ठीक बीच में जनकल्याण सेवा अधिकारी का दफ्तर था। साउंड सिस्टम पर मद्धिम आवाज़ में सरोद बज रहा था। स्वचालित कॉफी एण्ड स्नैक्स के वेंडर से, मन चाहे तो कुछ खा भी सकते थे। इस समय बाहर सांझ उतर रही थी। आकाश की छाती पर यह कल्याण-भवन बादल जैसा हवा में तैर रहा था। फिर भी कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। मन उदास हो तो कलाई पर बँधी छोटी-सी घड़ी की नीली स्विच दबा दो, बस। लेकिन उन दोनों को वो भी करने की इच्छा नहीं हो रही थी। उन जैसे और भी छः दम्पति माथे पर चिन्ता की लकीरें लिए इन्तज़ार कर रहे थे। मतलब उनके भी माता या पिता, सास या ससुर... 'अरा, रेमो, ब्लॉक नाइन, सेक्टर थ्री' पियानो जैसी सुरीली आवाज़ ध्वनित होती है। टेंशन के कारण रेमो अभी तक बैठ

नहीं पा रहा था। उसने फँसी-फँसी आवाज़ में अरा से पूछा, "माँ का कोड याद है न?" अरा ने गर्दन हिलाकर इशारे से 'हाँ' कहा।

कमरे के अन्दर पहुँचते ही एक छरहरी-सी लड़की ने आगे बढ़कर हाथ बढ़ा दिया। "अरा और रेमो हैं न? मैं युहाना, क्या लेंगे कहिए?" युहाना के पीछे की दीवार से समुन्दर झाँक रहा था। अरा को उस तरफ निहारते देखकर युहाना बोली, "समुन्दर मुझे पसन्द है, बदल दूँ?"

"नहीं, ठीक है।"

"क्यों, रेमो को तो जंगल प्रिय है और तुमको पहाड़।"

युहाना के अँगुली से इशारा करते ही दाहिनी तरफ की दीवार घने जंगल और बाएँ तरफ की दीवार पहाड़ में तबदील हो गई।

"ये सब बॉडी लैंग्वेज ऐक्टिवेटेड हैं, है न?"

युहाना ने मुस्कुराते हुए कहा, "बिलकुल ठीक। चलो, अब तुम लोगों की बात सुनी जाए।" एक छोटी-सी सेन्टर टेबल को घेरे तीन सोफे लगे थे। टेबल पर धुँआ उगलती कॉफी और चिकन पकौड़े रखे थे। वे चाहते तो होम वेब के ज़रिए भी युहाना के साथ वार्तालाप कर सकते थे। दरअसल, किसी ज़माने में इस दुनिया में नेट और विज़ुअल मीडिया की वजह से ऐड्स (अटेनशन डेफिसिट डिसआर्डर सिनड्रोम) नाम की एक खतरनाक बीमारी सब ओर तेज़ी-से फैल गई थी, जिस वजह से एकदम अकेले रहना पसन्द होना, मोटापा वगैरह समस्याओं ने विकराल रूप धारण कर लिया था। अब तो लोग बिना ज़रूरत के नेट का उपयोग करते ही नहीं थे। सरकार भी लोगों के बीच मेल-जोल पर ज़ोर दे रही थी। अरा के नानाजी भी इसी ऐड्स रोग के शिकार हुए थे।

"इस 14 सितम्बर को तो रोमानी साठ साल की हो जाएँगी?"

"हाँ।" अरा और रेमो एकसाथ बोल पड़े। रेमो का स्वर थोड़ा काँप गया क्या? यद्यपि वे बचपन से ही इस सरकारी नियम से वाकिफ हैं। फिर भी, कुछ भी हो, माँ हैं न!

"तुम दोनों तैयार तो हो न? वरना अभी भी छः महीने से ज़्यादा समय है, हमारा स्पेशल ऐडप्शन का दो महीने का कोर्स कर सकते हो, हफ्ते में तीन दिन।"

रेमो ने कहा, "अच्छा, कभी-कभी तो एक्सटेंशन भी होता है?"

"डोन्ट बी इमोशनल रेमो। पता है न, हज़ारों वर्ष पहले इसी देश में वानप्रस्थ जैसी प्रथा थी। हमारी 'पारापार' भी वैसी ही एक प्रथा कह सकते हो। सोचो ज़रा, दो-तीन सौ साल पहले पृथ्वी पर वृद्धाश्रम जैसी निष्ठुर परम्पराएँ हुआ करती थीं। उसकी अपेक्षा पारापार तो सौ गुना अच्छा है। और, यू नो, हमने जो भी

किया है, वह तो हमारी आने वाली पीढ़ी के बारे में कुछ सोचकर ही किया है। उनके लिए जगह बनाई जाए, इसके लिए ही तो पुरानी पीढ़ी को हट जाना होगा। एक दिन हम भी इसी तरह...।"

अरा युहाना की बात पूरी होने से पहले ही असहिष्णु स्वर में बोल पड़ी, "समस्या तो इसी अगली पीढ़ी के लिए ही है। चिंकारा अपनी दादी के लिए इतनी ऑब्सेस्ड है कि रोमानी के जाने के बाद शायद हम उसे ज़िन्दा भी न रख पाएँ।" अरा का स्वर रुँध गया। रेमो हौले-से अरा के हाथ पर दबाव डालते हुए बोला, "सच में युहाना, चिंकारा के बारे में सोच-सोचकर हमारी तो रातों की नींद ही उड़ गई है। हमारी बच्ची इतनी छोटी है, अभी पाँच की भी नहीं है। और बारह वर्ष के पहले तो कोई ऐडप्शन कोर्स भी नहीं करा सकते।"

युहाना की आँखों की चमकती रोशनी भी बुझ-सी गई। "लेकिन हम मजबूर हैं रेमो। तुमको तो पता ही है, हम केवल विशिष्ट नागरिकों को ही एक्सटेंशन दे सकते हैं। जैसे कि, साहित्यकार, वैज्ञानिक, वह भी ज्यूरीबोर्ड यदि अनुमति देती है, तभी। वैसे, आई मस्ट एडमिट, अभी तक हम भ्रष्टाचार को देश से निकाल बाहर नहीं कर पाए हैं। इसलिए सत्ताधारी पार्टी की छत्रछाया में रहने वाले गैरकानूनी ढंग से बहुत सारे फायदे ले रहे हैं। वैसे सच में मेरे हाथ में कुछ भी नहीं है। फिर डेटा दिखा रहा है कि रोमानी की कोई खास सामाजिक देन नहीं है।"

रेमो के दिमाग में एक के बाद एक

तस्वीरें घूम जाती हैं। छुट्टी के बाद स्कूल के फाटक के सामने खड़ी माँ, बुखार के वक्त सिरहाने पर बैठी माँ, हवाई जहाज़ दुर्घटना में पिताजी की मौत के बाद अरित्र चाचा का दिया शादी का प्रस्ताव ठुकराने वाली माँ, चिंकारा को लेकर बाग से घर लौटने वाली माँ, और इधर डेटा दिखा रहा है कि रोमानी की कोई खास सामाजिक देन नहीं है।

"एक्सट्रीमली सॉरी, तुम दोनों को चिंकारा को समझाना होगा। हर बच्चे को तालमेल बिठाना ही पड़ता है।"

अरा कहने वाली थी, "लेकिन वो तो..." लेकिन रेमो ने उसकी बात पूरी हो, इसके पहले ही कहा, "ठीक है, चलो, चलते हैं।"

फिर अरा का हाथ पकड़कर झट-से उसे कमरे से बाहर खींच लाया। एक भयानक आवेश उसके दिमाग को कचोट रहा था।

* * *

थोड़ी देर पहले ही अरा दफ्तर से वापस लौटी थी। नहा-धोकर बैठकखाने में सोफे पर बैठकर एक मैगज़ीन के पन्ने पलट रही थी। सुना है कि उसकी दादी ने बचपन में कोई किताब ही नहीं पढ़ी। उन दिनों लोगों पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की इतनी खुमारी चढ़ी थी कि किताबें छपनी ही लगभग बन्द हो गई थीं। वैसे आजकल ढेरों पत्र-पत्रिकाएँ छप रही हैं। लेकिन नई कहानी या कविताएँ लोग आजकल लिखते ही नहीं। सभी पत्रिकाएँ रीप्रिन्ट करके ही अपने पन्ने भरा करती हैं। अरा अनमनी-सी पन्ने पलट रही थी। एकाएक उसकी दृष्टि एक फीचर पर अटक गई। लगभग दो सौ साल पुराने किसी लेख का पुनर्मुद्रण। इन्सान का क्लोन बनना चाहिए या नहीं, लेख इसी पर था। "क्या बेवकूफों जैसा लिखा है!" उसने पत्रिका रख दी। किसी दौर में ह्यूमन क्लोनिंग इतनी अन्धाधुन्ध हो रही थी कि ढेरों समस्याएँ उठ खड़ी हुई थीं। इसीलिए पिछली सदी में एक सख्त कानून बनाकर ह्यूमन क्लोनिंग पर पाबन्दी लगा दी गई।

रेमो को आज लौटने में रात होगी। खिड़की से बाहर देखकर अरा थोड़ी चकित रह गई। बारिश हो रही थी। अगस्त के महीने में बारिश तो हो ही सकती है। लेकिन क्या उन लोगों का वेदर रिपोर्ट गेजेट काम नहीं कर रहा है? नहीं, केवल उनके लॉन में नहीं, पूरे ब्लॉक में ही बारिश हो रही है। लाल रंग का सिक्योरिटी चेक पोस्ट, पिच, मेपल के पेड़, सभी भीग रहे हैं। ब्लॉक में सभी के गेजेट बिगड़ गए क्या? ओ हो, आज तो शनिवार है। देश में कवियों की संख्या में भारी गिरावट आने के कारण दो साल पहले, प्रधान सांस्कृतिक सलाहकार ने एक रेन बिल पास करवाया था। महीने में चार दिन बारिश झेलना ही है। कहते हैं कि बारिश की रिमझिम से कविता लिखने की अकुलाहट

जाग उठती है। पता नहीं बाबा, दिन भर बारिश को तकने के बाद भी अरा से तो एक शब्द भी लिखा नहीं जाएगा। दरअसल, अरा एक भी अक्षर नहीं लिख सकती क्योंकि उसे पूरी ट्रेनिंग वर्बल और पिक्टोरियल कम्युनिकेशन के ज़रिए दी गई है।

उसके बाग में एक बड़ा-सा पेड़ है, सेमल का। उसके नीचे सफेद बेंच पर बैठकर बारिश में भीगते हुए चिंकारा रोमानी से सटकर कहानी सुन रही है। अरा डर के मारे सिहर-सी गई। चिंकारा को तो कोई बीमारी नहीं होगी। लेकिन रोमानी? और बस एक महीने बाद ही उनको पारापार भेजना होगा। ऐन वक्त पर अगर वह बीमार पड़ गईं तो? मानवाधिकार कमिशन के लोग और पत्रकार डण्डा लेकर दौड़े आएँगे। अरा के दफ्तर में एक बड़ी लिफ्ट की बात चल रही है, सब रद्द हो जाएगा। और यदि उन लोगों को पता चल गया कि चिंकारा के लिए बारिश में भीगने से रोमानी बीमार पड़ी हैं, तब क्या कुछ हो सकता है, यह सोचकर ही अरा सिहर गई। हाँलाकि, किसी को कुछ पता नहीं है, फिर भी अरा और रेमो हमेशा डर से काठ बने रहते हैं।

इन्सान इतना आगे बढ़ चुका है, फिर भी दिल से इतना प्रिमिटिव - किसी भी हाल में नहीं स्वीकार कर पा रहा है। रेमो ने प्यार से बेटी का नाम रखा है चिंकारा, सचमुच वह

हिरणी की तरह फुदकती रहती है। उसकी आँखों में झाँकते ही अरा अपने सारे दु:ख भूल जाती है।

"उदास होने पर उसकी आँखों में देखिएगा।" जयव्रत ने कहा था। उस समय आँख-वाँख नहीं, अरा किसी और बात को लेकर टेंशन में थी। "उसकी बुद्धि का लेवेल थोड़ा कम, मतलब हमारी तरह रखा है न? वरना हम मुश्किल में पड़ जाएँगे।"

"डोण्ट वरी, उन लोगों की अपेक्षा वह कुछ ज़्यादा ही भावुक और कम बुद्धिवाली है।"

अरा ने खिड़की से पुकारा, "तुम दोनों वहाँ क्या कर रहे हो? अन्दर आओ।"

रोमानी का हाथ पकड़कर चिंकारा अन्दर आ रही है। उसे देखकर अरा हैरान हो जाती है। क्या यह भी सम्भव है? चिंकारा का इतना लगाव! यदि सबको पता चल जाए कि चिंकारा इतनी संवेदनशील है, तो शायद वह इतना बड़ा मुद्दा बन जाएगा कि सरकार ही गिर जाएगी। इन्सान का अन्तिम गर्व भी छीना जा रहा है, इस बात को लेकर विरोधी पार्टियाँ हो-हल्ला मचा देंगी। सुना है, पहले के ज़माने में सफेद चमड़ीवाले काले लोगों के साथ बुरा बर्ताव करते थे। अब तो आमने-सामने दो ही श्रेणी खड़ी हैं, मानव और मशीन-मानव।

रोमानी अपने और चिंकारा के

भीगे कपड़े बदलकर कमरे में आईं। देखकर पता नहीं चलता कि उनके पास अब सिर्फ एक महीने की मियाद रह गई है। पारापार से कोई लौटकर नहीं आता। एक दिन अरा और रेमो को भी वहाँ जाना होगा। अच्छा चिंकारा... फिर से सिर से पाँव तक एक सर्द झुरझुरी-सी उठी। और तभी 'माँ' कहती हुई चिंकारा उसकी गोद में कूद पड़ी। "पापा को लौटने में रात होगी क्या?"

"हाँ बेटी, लेकिन तुम उतनी देर तक नहीं जगना। थोड़ी देर बाद तुमको खाना खिलाकर सुला दूँगी।"

"नहीं, मुझे दादी खिलाएँगी।"

"दादी की तबियत ठीक नहीं है, सोना।"

"इश्श, नहीं।"

अरा ने लाचार नज़रों से रोमानी की ओर देखा। उनकी आँखें इस साँझ के आकाश जैसी सिक्त (भीगी हुई) हैं। सारी दुनिया में सिर्फ चार लोगों को पता है - अरा, रेमो, रोमानी और जयव्रत। रोमानी चिंकारा को धीरे-धीरे खिलौनेवाले कमरे में ले गईं। तभी फोन की घण्टी बजी। "ज़रूर रेमो का फोन होगा, क्या लौटने में और देर होगी? हैलो।"

"मैं युहाना, अरा बोल रही हो न?"

अरा ने कुछ अनिश्चित-से स्वर में कहा, "हाँ, लेकिन बात क्या है?"

अचानक से उसे इस फोन का मतलब समझ में नहीं आया। जब कुछ और हो ही नहीं सकता...

"कल एक बार आ सकोगी, यही शाम के चार बजे के करीब?"

दर्द और तनाव से दिमाग उलझ-सा गया है। उसने बड़ी मुश्किल से कहा, "ठीक है।"

* * *

वही कमरा, वही कॉफी और पकौड़े, दीवार पर नीला समन्दर, युहाना के चेहरे पर वैसी ही मुस्कुराहट, कुछ महीने पहले की एक शाम को भी ऐसी ही मुस्कुराहट थी।

"बैठो, दरअसल तुम्हारे जैसे और कई केस हमारे पास आए हैं। शायद इस पर बहुत जल्द ही उच्च स्तरीय बैठक होगी। लेकिन ये सब तो एक-दो दिन का मामला नहीं है। कई साल भी लग सकते हैं।"

अरा और रेमो ने एक-दूसरे की ओर देखा। जब कुछ कर ही नहीं सकते तो इस तरह बुलाने का क्या तुक है! युहाना उनकी मनोदशा को भाँपकर बोली, "मैंने एक दूसरा उपाय सोचा है।"

"एक्सटेंशन?" रेमो की आँखों में आशा की किरण झाँक उठी।

"ऊँहूँ, रिप्लेसमेन्ट।"

"रिप्लेसमेन्ट!"

"हाँ, हूबहू रोमानी जैसा एक ह्यूमनॉइड बना देना। तुम्हारी बेटी पकड़ ही नहीं पाएगी कि जिससे वह

दादी समझकर लिपट रही है, वह उसकी हाड़-मांस की दादी नहीं, बल्कि एक ह्यूमनॉइड है।"

"नहीं-नहीं," रेमो के स्वर में कराह थी। "चिंकारा पक्का पकड़ लेगी।"

युहाना की सिकुड़ी भौंहे देखकर अरा जल्दी-से बोल पड़ी, "असल में चिंकारा बहुत संवेदनशील है। वो फैन्सी ड्रेसवाली पार्टी का वाकया याद है? तुम कैसी अजीब ड्रेस में आई थीं, लेकिन चिंकारा ने पहचान लिया था।"

"नहीं-नहीं, असम्भव। तुम्हारी बेटी चाहे कितनी ही तेज़ क्यों न हो, इन्सान और ह्यूमनॉइड के बीच के फर्क को पकड़ना उसके लिए नामुमकिन है। जब बड़े ही पकड़ नहीं सकते। वरना क्या संविधान में विशेष संशोधन करके ह्यूमनॉइड्स को सारे नागरिक अधिकार दिए जाते? सोचो तो ज़रा।"

"हमारी बेटी के लिए सब कुछ मुमकिन है, युहाना। क्योंकि वह खुद एक ह्यूमनॉइड है। अरा में कुछ समस्याएँ रहने के कारण चार साल सात महीने पहले हम उसे एक वैज्ञानिक मित्र की लैब से ले आए थे।"

रेमो कहीं पागल तो नहीं हो गया? अरा के सामने पूरी दुनिया जैसे डोल उठी। दीवार की लहरें ऑक्टोपस की सूँड जैसी जान पड़ रही थीं।

"ह्यूमनॉइड?" नफरत से युहाना का सुन्दर चेहरा सिकुड़ गया।

"तुम दोनों को पता है न कि हमने ह्यूमनॉइड अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बनाए हैं, उनके साथ सामाजिक बन्धन जोड़ने के लिए नहीं।"

"नहीं युहाना, हमने ह्यूमनॉइड बनाए हैं, इस दुनिया को रहने योग्य बनाने के लिए। इन्सान जिस तरह किसी ज़माने में समस्त इन्सानियत खो चुका था, उस तबाही के हाथ से बचने के लिए ही मानव की सभी अच्छाइयों को छाँटकर ह्यूमनॉइड तैयार किया गया है।" रेमो ने एक ही साँस में इतना कुछ कह डाला।

"कूल डाउन रेमो," युहाना की वही मुस्कुराहट फिर से लौट आई थी, "लेकिन इसके कंसक्वेन्स के बारे में सोचा है तुम लोगों ने? अगर बात खुल गई तो..."

"कौन खोलेगा?"

"क्यूँ, मैं? अगर तुम दोनों मेरी एक शर्त पर राज़ी नहीं हुए तो।"

"कैसी शर्त?"

"मेरे भाई की ह्यूमनॉइड की एक फैक्टरी है। वहाँ से तुमको रोमानी का एक ह्यूमनॉइड खरीदना होगा। फॉर्टी फाइव करोड़ कैशडाउन।"

रेमो ने सर्द लहज़े में कहा, "और तुम कितना लोगी?"

"थोड़ा ज़्यादा आएगा, कइयों को मैनेज करना है।" "सुनो युहाना, मैं चाहूँ तो माँ की उम्र, चिंकारा की

खुशी तुमसे खरीद सकता हूँ, लेकिन खरीदूँगा नहीं। मेरी छोटी-सी दुनिया को मैं चकनाचूर कर दूँगा, लेकिन तुमसे कभी नहीं खरीदूँगा।"

"यह तुम्हारा मामला है रेमो, मुझे अपना काम करना है।"

रेमो उत्तेजित होकर कुछ और कहने जा रहा था, परन्तु अरा उसकी बाँह पकड़कर बाहर खींच लाई। नीचे आकर दोनों ने उस इमारत की ओर देखा। आसमान में बादलों की तरह वह 'कल्याणभवन' तैर रहा था। सूरज डूबने को था। इसीलिए बादलों पर खून के छींटे बिखरे थे।

"अच्छा, अगर हम चिंकारा को उनके चंगुल से छुड़ा भी लें, तो क्या एक दिन वह भी युहाना जैसी बन जाएगी? खून-मांस से न बनी सही, है तो हमारी ही आत्मजा, इन्सान के हाथों से बनी।"

रेमो खामोश ही रहा।

तृष्णा बसाक: सन् 1970 में कोलकाता में जन्म। आधुनिक बंगाली साहित्य की एक उल्लेखनीय कवयित्री, कहानीकार, उपन्यासकार और निबन्धकार हैं। जादवपुर विश्वविद्यालय से बी.ई. और एम.टेक. करने के बाद, तृष्णा ने साहित्य के प्रति अपने जुनून को आगे बढ़ाने के लिए अपनी पढ़ाई पर आधारित स्वाभाविक करियर छोड़ दिया। साहित्य अकादमी के साथ उनके 5 साल के कार्यकाल ने उन्हें भारतीय साहित्य के साथ निकट सम्पर्क में आने का मौका दिया। वर्तमान में, वे एक पूर्णकालिक लेखिका, सम्पादक और अनुवादक हैं। वे कोलकाता ट्रांसलेटर्स फोरम की सचिव भी हैं। कविताओं, लघु कथाओं, उपन्यासों, निबन्धों और अनुवादित कार्यों की लगभग 50 पुस्तकें प्रकाशित। कई प्रतिष्ठित अनुदानों और पुरस्कारों से सम्मानित। तृष्णा को जटिल विषयों के साथ प्रयोग करना पसन्द है। कोलकाता में रहती हैं।

बांग्ला से अनुवाद: लिपिका साहा: सन् 1965 में कोलकाता में जन्मी प्रसिद्ध अनुवादक जो हिन्दी और बांग्ला साहित्य के क्षेत्र में अपने विस्तृत अनुवाद कार्य के लिए जानी जाती हैं। आपके पास उपन्यास, कविता, लघु कथाएँ, और नाटक को बांग्ला से हिन्दी और हिन्दी से बांग्ला में व्याख्या करने का उत्कृष्ट कौशल है। आप भारतीय ज्ञानपीठ, भारतीय भाषा परिषद, राजस्थान पत्रिका, दिल्ली प्रेस और कई अन्य प्रसिद्ध संस्थानों से जुड़ी रहीं। अनुवाद कार्य के क्षेत्र में योगदान के लिए आपको सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार 2020 से सम्मानित किया गया।

सभी चित्र: गायत्री: प्रकृति और पक्षी प्रेमी हैं। यात्रा करना और आउटडोर स्केचिंग उनका पसन्दीदा शगल है। उन्होंने एनीमेशन फिल्म डिज़ाइन में स्नातक किया है और ज़्यादा-से-ज़्यादा चित्रकारी करने की कोशिश करती हैं। ठाणे, महाराष्ट्र में रहती हैं।

50 YEARS of HSTP
होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम

सवालीराम

सवाल: कुकर में सेफ्टी वॉल्व क्यों लगाया जाता है?

– होशंगाबाद, म.प्र.

जवाब: पाठ्यपुस्तकों में हम अक्सर पढ़ते हैं कि पहाड़ों पर दाल पकाने या खाना पकाने में इस बात का ध्यान रखना होता है कि दाल-चावल या सब्ज़ी कहीं कच्ची न रह जाए। कुछ लोगों का तजुर्बा है कि पहाड़ों पर खाना पकाते समय पानी उबलता तो दिखाई देता है लेकिन फिर भी आलू का कच्चा रह जाना या चावल-दाल का अधपका रह जाना जैसी घटनाएँ हो जाती हैं। ऐसी घटनाओं के साथ पहाड़ों पर वायुमण्डलीय दबाव कम होने की बात भी कही जाती है। किसी तरल के क्वथनांक को दबाव किस तरह प्रभावित करता है, यह समझने के लिए प्रेशर कुकर एक बढ़िया उदाहरण हो सकता है। इस पर हम थोड़ी देर बाद बात करेंगे।

भारत में 1960 के दशक से प्रेशर कुकर के रसोईघर का हिस्सा बनने के बाद से खाना पकाना काफी आसान हो गया और ईंधन की बचत भी होने लगी। तो, चलिए पहले कुछ

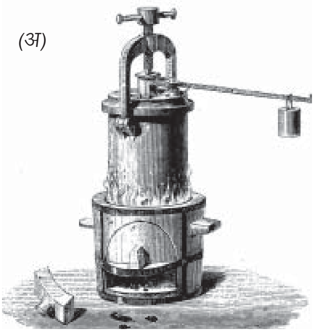

चित्र-1: समयान्तराल के साथ कुकर में होने वाले बदलाव। (अ) सोलहवीं शताब्दी में व्यवसायिक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला स्टीम डाइजेस्टर। (ब) अठारहवीं शताब्दी में इस्तेमाल किया जाने वाला कुकर। (स) वर्तमान में उपयोग किया जाने वाला प्रेशर कुकर।

बातचीत प्रेशर कुकर और प्रेशर कुकर के इस्तेमाल को किस तरह सुरक्षित बनाया जाता है, इन सबके बारे में करते हैं।

प्रेशर कुकर के इतिहास की बात करें तो, वर्ष 1679 में फ्रांसीसी भौतिक शास्त्री डेनिस पापेन ने पहला प्रेशर कुकर बनाया था जिसे उन्होंने 'स्टीम डाइजेस्टर' नाम दिया। पापेन ने यह आविष्कार लंदन की रॉयल सोसाइटी के समक्ष प्रस्तुत भी किया यद्यपि उस समय कुकर का उपयोग करना सरल नहीं था क्योंकि इसके इस्तेमाल के लिए खास तरह की भट्टी ज़रूरी थी। एक लम्बे समय अन्तराल के बाद होटलों व उद्योगों में धीरे-धीरे इसका उपयोग होने लगा। लोगों के घर की रसोई में प्रेशर कुकर का इस्तेमाल लगभग 20वीं सदी में आरम्भ हुआ।

प्रेशर कुकर शब्द का इस्तेमाल पहली बार वर्ष 1915 में हुआ था। अमेरिका के न्यू यॉर्क में वर्ष 1939 में आयोजित एक विश्व स्तरीय मेले में अल्फ्रेड विशलर ने पहली बार ऐसा एल्युमिनियम प्रेशर कुकर प्रदर्शित किया जिसका आकार घरों में खाना बनाने वाले पतीले जैसा था। कुकर अपने आकार और जल्दी खाना पकाने के गुण के कारण जल्द ही लोकप्रिय हो गया।

कुकर की कार्य पद्धति पानी के क्वथनांक पर दाब (प्रेशर) के असर पर आधारित है। कुकर के ढक्कन में लगा रबर का गास्किट भाप को कुकर से बाहर जाने से रोकता है। इस वजह से खाना पकाने के दौरान बनने वाली भाप बाहर नहीं निकलती। और आँच के कारण जैसे-जैसे कुकर के अन्दर प्रेशर बढ़ता जाता है वैसे-वैसे पानी का क्वथनांक बढ़ता जाता है जिसके कारण कुकर में मौजूद खाद्य पदार्थ जल्दी से पक जाता है। जैसे-जैसे घरों में प्रेशर कुकर का इस्तेमाल बढ़ने लगा, इसके उपयोगकर्ता की सुरक्षा के लिए भी प्रयास किए जाने लगे। कुकर में सुरक्षा के दृष्टिकोण से दो तरह के सुरक्षा सिस्टम लगे होते हैं।

पहली सुरक्षा - कुकर की सीटी

इसे तकनीकी भाषा में प्रेशर वॉल्व भी कहते हैं। कुकर में खाना पकाते समय यदि भाप का दबाव सीटी के वज़न से अधिक हो जाए तो सीटी ऊपर उठती है और भाप बाहर निकलने लगती है। साथ ही, एक सुन्दर सीटी की आवाज़ आती है। अनुभव के साथ लोग समझने लगते हैं कि चावल, दाल, आलू, कंद, छोले, चना आदि पकाने के लिए कितनी बार सीटी बज जाना पर्याप्त होगा।

दूसरी सुरक्षा - सेफ्टी वॉल्व

इसे PSV (Pressure Safety Valve) नाम से भी जाना जाता है। यदि आप ध्यान से देखेंगे तो इसके बीच के हिस्से में किसी मिश्र धातु से इसका छेद बन्द किया हुआ दिखाई देगा।

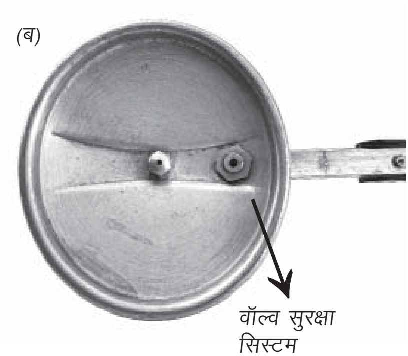

चित्र-2: *कुकर में दोनों प्रकार के सुरक्षा सिस्टम दर्शाते चित्र। (अ) यदि भाप का दबाव सीटी के वज़न से अधिक हो जाए तो सीटी ऊपर उठ जाती है और भाप बाहर निकलने लगती है।*
(ब) सीटी सुरक्षा सिस्टम के काम न करने पर सुरक्षा वॉल्व पिघल जाता है जिस वजह से भाप बाहर निकल जाती है और कुकर में विस्फोट नहीं होता।

सेफ्टी वॉल्व की ज़रूरत इसलिए भी है कि बहुत सम्भव है कि खाना पकाते समय प्रेशर कुकर की सीटी के छेद में कोई खाद्य सामग्री का कण फँस जाए और सीटी जाम हो जाए। या किसी और कारण से छेद बन्द हो जाए जिसके फलस्वरूप भाप का दबाव सीटी के वज़न से अधिक होने के बाद भी सीटी ऊपर न उठ पाए है। जब भाप बाहर नहीं निकल पाती है तो भाप का दाब बढ़ता जाता है। ऐसे हालात में तापमान बढ़ने लगता है और कुकर में विस्फोट हो सकता है। इस स्थिति में कुकर के ढक्कन में लगा सेफ्टी वॉल्व पिघल जाता है और भाप बाहर निकल जाती है। सेफ्टी वॉल्व में ऐसी मिश्र धातु का प्रयोग किया जाता है जो निश्चित दाब एवं ताप पर पिघल जाती है जिससे कुकर फटने से बच जाता है।

सेफ्टी वॉल्व मूलतः एल्युमीनियम या स्टेनलेस स्टील का बना होता है। सेफ्टी वॉल्व के छेद को आम तौर पर सीसा और टिन जैसी धातुओं से सील किया जाता है। चूँकि सीसा का गलनांक कम होता है इसलिए सेफ्टी वॉल्व में सीसा के साथ कार्बन व लोह की कुछ मात्रा मिलायी जाती है जिससे निश्चित तापमान पर ही सेफ्टी वॉल्व पिघलकर खुल जाए और विस्फोट होने से बच सके।

सुरक्षा वॉल्व की सील खुलने के बाद हम इसका दोबारा प्रयोग नहीं कर सकते, हमें नया वॉल्व लगवाना होता है। नया वॉल्व खरीदते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वॉल्व उच्च गुणवत्ता का हो जो एक खास दाब एवं ताप पर पिघल जाए।

हिमांशु बावनकर: *संदर्भ पत्रिका से सम्बद्ध हैं।*

दाब और क्वथनांक का रिश्ता

अक्सर पाठ्यपुस्तकों में बताया जाता है कि पहाड़ों पर वायुमण्डलीय दबाव कम होने के कारण पानी कम तापमान पर उबलने लगता है। यानी पानी का क्वथनांक बिन्दु सामान्य से कम हो जाता है जिसकी वजह से सामान्य डेगची में खाना पकाते समय आलू या चावल या दाल कच्चे रह जाते हैं।

प्रेशर कुकर एक सामान्य सिद्धान्त पर काम करता है - यदि किसी तरल पर दबाव बढ़ाया जाए तो उसका क्वथनांक भी बढ़ता जाता है। इस सिद्धान्त का उपयोग प्रेशर कुकर में खाना पकाने में होता है। प्रेशर कुकर के भीतर का वाष्प दाब बढ़ता जाता है और पानी का क्वथनांक बिन्दु भी बढ़ता है। उदाहरण के लिए, कुकर के भीतर वाष्प दाब जब लगभग 1.4 वायुमण्डलीय दाब के बराबर हो जाता है तो पानी का क्वथनांक बिन्दु 110 डिग्री तक पहुँच जाता है (सामान्य आदर्श स्थितियों यानी **1ATP** में पानी का क्वथनांक 100 डिग्री सेंटीग्रेड होता है)। यदि वाष्प दाब 4.7 वायुमण्डलीय दाब तक पहुँच जाए तो पानी का क्वथनांक 150 डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुँच जाता है।

शायद आप भी जानने के लिए उत्सुक होंगे कि यदि सचमुच पहाड़ों पर जाकर आलू उबालने की कोशिश की जाए तो सामान्य डेगची में पानी का क्वथनांक कितना होगा। हमने बॉइलिंग पाइंट-अल्टीट्यूड कैल्कुलेटर (www.omnicalculator.com/chemistry/boiling-point-altitude) की मदद से जानने की कोशिश की। कुछ आँकड़े आपके साथ साझा कर रहे हैं।

स्थान	समुद्र तल से ऊँचाई (मीटर में)	वायुमण्डलीय दबाव (hPa)*	पानी का क्वथनांक (डिग्री सेंटीग्रेड में)
होशंगाबाद	300	977.7	99.03
पचमढ़ी (धूपगढ़)	1300	866.5	95.73
गुरूशिखर	1700	825	94.4
माऊंट एवरेस्ट	8848	314.45	68.05

इस तालिका से आप इतना तो जान ही गए होंगे कि हिमालय जैसे ऊँचे पहाड़ पर वायुमण्डलीय दाब और क्वथनांक बिन्दु में भारी अन्तर दिखाई देता है। ऐसी ऊँचाइयों पर प्रेशर कुकर की खासियत और ईंधन की खपत में बचत को आसानी-से समझा जा सकता है। माऊंट एवरेस्ट पर प्रेशर कुकर में खाना पकाना फिलहाल एक अच्छा खयाली पुलाव है!

- माधव केलकर

** hPa - हेक्टोपास्कल पास्कल का 100x गुणक है जो दबाव के लिए एसआई इकाई है। हेक्टोपास्कल वायुमण्डलीय या बैरोमीटर का दबाव मापने की अन्तर्राष्ट्रीय इकाई है। 1 हेक्टोपास्कल 100 पास्कल के बराबर होता है।*

जवाब 2: इस दौड़ती-भागती ज़िन्दगी में घण्टों का काम मिनटों में कर देता है कुकर। और ऐसे में मेरे कुकर में कुछ परेशानी आ गई है - कभी सीटी मारता है, कभी नहीं मारता। कभी खूब पानी बाहर निकलने लगता है, तो कभी सीटी के इन्तज़ार में पूरा पानी सूख जाता है। इसलिए मैं उसे लेकर एक बर्तन की दुकान पर पहुँची। मेरी परेशानी सुनने के बाद दुकानदार ने बोला, "कुछ नहीं मैडमजी, वॉल्व बदलवा लीजिए।" मैंने तुरन्त आश्चर्य के साथ पूछा, "कुकर में भी वॉल्व होता है? मैंने तो सिर्फ साइकिल में सुना था।" उन्होंने हँसकर जवाब दिया, "हाँ होता है और उसके बिना कुकर किसी काम का नहीं होता।"

मैंने पूछा, "कुकर में वॉल्व का क्या काम होता है?" उन्होंने बड़े आराम-से मुझे समझाया कि कुकर में जब भाप बनती है तो वह कुकर के भीतर एक दबाव का निर्माण करती है। अगर यह दबाव अधिक हो जाता है तो कुकर फट सकता है। यह सेफ्टी वॉल्व इस दबाव को नियंत्रित करने में मदद करता है। जैसे ही भाप के कारण दबाव बढ़ता है, यह सेफ्टी वॉल्व खुल जाता है और अतिरिक्त भाप बाहर निकल जाती है।

इसके अलावा यह कुकर में बनी ज़रूरी भाप को बाहर भी नहीं निकलने देता, जिससे खाना जल्दी पक जाता है और साथ ही ईंधन की बचत भी हो जाती है। कुकर के अन्दर एक निश्चित दबाव बनाए रखने के लिए यह सेफ्टी वॉल्व बहुत ही ज़रूरी है। इसकी समय-समय पर सफाई करना भी ज़रूरी है, अन्यथा कुकर फट सकता है और जनहानि की भी सम्भावना है। ध्यान रखें कि किसी भी गन्दगी के कारण सेफ्टी वॉल्व बन्द न हो। और खराब होने पर तुरन्त ही उसे बदल दें।

इस बीच मैंने देखा कि दुकानदार किसी पावडर की मदद से सेफ्टी वॉल्व को साफ करते जा रहे थे। मेरे पूछने पर उन्होंने बताया कि "यह बेकिंग सोडा है, जिससे आसानी-से सेफ्टी वॉल्व को साफ किया जा सकता है।" दुकानदार से बात करने से आज बहुत-सी बातें मुझे पता चलीं। और यह भी कि कुकर की और हमारी सेफ्टी के लिए सेफ्टी वॉल्व कितना ज़रूरी है।

आयुषी जैन: अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, धामनोद, धार में विज्ञान की रिर्सोस पर्सन हैं।
इसी तरह का जवाब हमें *संदर्भ* के एक और पाठक, अरुण यादव से भी प्राप्त हुआ।

इस बार का सवाल: नारियल के अन्दर पानी कैसे आता है?

– होशंगाबाद, म.प्र.

आप हमें अपने जवाब sandarbh@eklavya.in पर भेज सकते हैं।

प्रकाशित जवाब देने वाले शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अन्य को पुस्तकों का गिफ्ट वाउचर भेजा जाएगा जिससे वे पिटाराकार्ट से अपनी मनपसन्द किताबें खरीद सकते हैं।

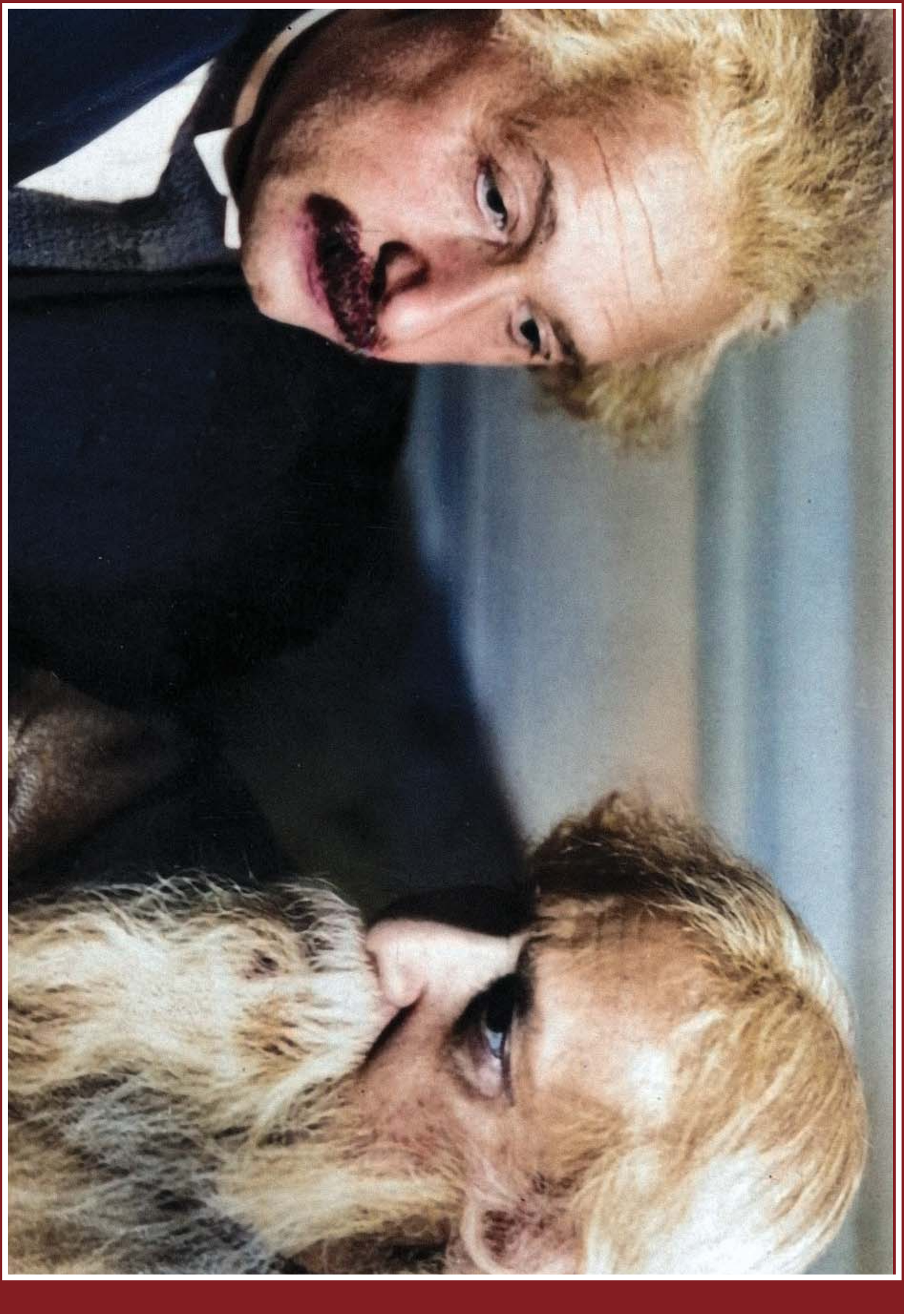

RNI No.: MPHIN/2007/20203

coming soon ...

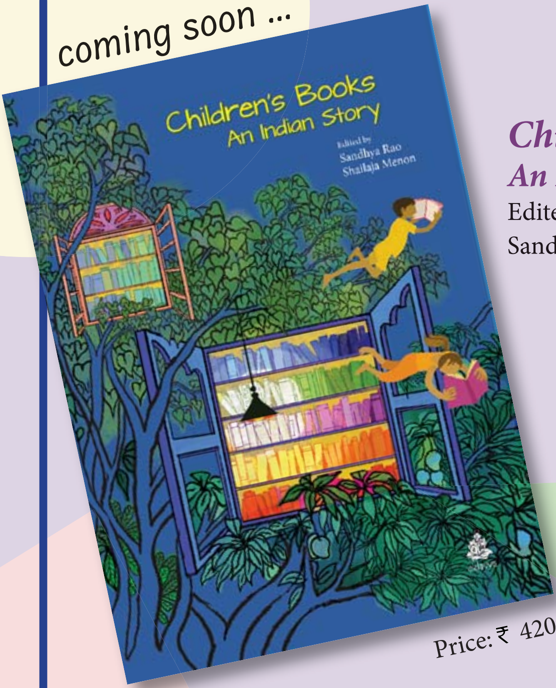

Children's Books: An Indian Story

Edited by Shailaja Menon & Sandhya Rao

Price: ₹ 420

- *400+ pages with colour images*
- *A must-have title focussing on:*
  - *the trajectory of children's book publishing in India,*
  - *its key accomplishments and challenges,*
  - *representation of diverse childhoods, and*
  - *evolution of distinctive voices.*
- *Essays by pioneers and practitioners of children's literature in India*
- *Developed by Parag (an initiative of Tata Trusts)*

Order now for special discount

Phone: +91 755 297 7770-71-72; Email: pitara@eklavya.in
www.eklavya.in | www.pitarakart.in

eklavya

प्रकाशक, मुद्रक, टुलटुल बिस्वास द्वारा निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन की ओर से, एकलव्य, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल - 462 026 (म.प्र.) से प्रकाशित तथा भण्डारी प्रेस, ई-2/111, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।